

हमने जो भी पैग़म्बर भेजा क़ौम की
अपनी ज़बान में भेजा, ताकि वह उनसे
(हमारा पैग़ाम साफ़-साफ़) बयान कर
दे..... (कुरआन 14:04)

कुरआन का आसान तर्जुमा

हिंदी में

Published by

Al-Quran Publication

A mission of producing the clear
& quality translations of the Quran

तर्जुमा :- मौलाना वहीदुद्दीन ख़ान

दावती नोट्स :- अब्दुर-रहमान चाऊस

Designed By :- अब्दुल-अज़ीज़ चाऊस

First Published :- March 2013

© Al-Quran Publication

Al-Quran Publication,
Visawa Nagar,
Nanded-431602,
(Maha-India)
Mobile-09767172629

Printed In India

विषय- सूची

सूरह के नाम	पेज नं.	सूरह के नाम	पेज नं.
कुरआन: किताबे-दावत	05	27. अन-नम्ल	328
कुरआन: एक परिचय	43	28. अल-क़सस	334
1. अल-फ़ातिहा	46	29. अल-अन्कबूत	343
2. अल-बक्राह	47	30. अर-रूम	349
3. आले-इमरान	81	31. लुक़मान	353
4. अन-निसा	102	32. अस्-सजदा	356
5. अल-माइदा	120	33. अल-अहज़ाब	359
6. अल-अनआम	137	34. सबा	367
7. अल-आराफ़	156	35. फ़ातिर	373
8. अल-अनफ़ाल	177	36. या० सीन०	379
9. अत-तौबा	184	37. अस-साफ़फ़ात	384
10. यूनुस	197	38. सॉद०	389
11. हूद	206	39. अज़-ज़ुमर	393
12. यूसुफ़	215	40. अल-मोमिन	401
13. अर-रअद	224	41. हा० मीम० अस-सजदा	409
14. इब्राहीम	230	42. अश-शूरा	415
15. अल-हिज़्र	236	43. अज़-ज़ुख़रुफ़	421
16. अन-नहल	241	44. अद-दुख़ान	426
17. बनी इसराईल	251	45. अल-जासिया	428
18. अल-कहफ़	260	46. अल-अहक़ाफ़	431
19. मरयम	271	47. मुहम्मद	435
20. ता० हा०	277	48. अल-फ़तह	439
21. अल-अंबिया	286	49. अल-हुजुरात	444
22. अल-हज	294	50. क़ाफ़०	446
23. अल-मोमिनून	302	51. अज़-ज़ारियात	448
24. अन-नूर	307	52. अत-तूर	451
25. अल-फ़ुरक़ान	314	53. अन-नज़्म	452
26. अश-शुअरा	320	54. अल-क़मर	454

सूरह के नाम	पेज नं.	सूरह के नाम	पेज नं.
55. अर-रहमान	457	85. अल-बुरूज	514
56. अल-वाकिआ	459	86. अत-तारिक	515
57. अल-हदीद	461	87. अल-आला	515
58. अल-मुजादला	467	88. अल-गाशियह	516
59. अल-हथ्र	470	89. अल-फ़ज्र	516
60. अल-मुम्तहिना	472	90. अल-बलद	517
61. अस-सफ़्फ़	474	91. अश-शम्स	518
62. अल-जुमुआ	477	92. अल-लैल	518
63. अल-मुनाफ़िकून	478	93. अज़-ज़ुहा	519
64. अत-तगाबुन	479	94. अल-इनशिराह	519
65. अत-तलाक़	481	95. अत-तीन	519
66. अत-तहरीम	483	96. अल-अलक़	520
67. अल-मुल्क	485	97. अल-क़द्र	520
68. अल-क़लम	487	98. अल-बय्यिनह	520
69. अल-हाक्का	490	99. अज़-ज़िल्ज़ाल	521
70. अल-मआरिज	491	100. अल-आदियात	521
71. नूह	493	101. अल-कारिआ	522
72. अल-ज़िन्न	496	102. अत-तकासुर	522
73. अल-मुज़ज़म्मिल	498	103. अल-अस्र	523
74. अल-मुद्स्सिर	500	104. अल-हु-म-ज़ह	523
75. अल-क्रियामह	501	105. अल-फ़ील	524
76. अद-दहर	502	106. कुरैश	524
77. अल-मुरसलात	504	107. अल-माऊन	524
78. अन-नबा	506	108. अल-कौसर	525
79. अन-नाज़िआत	507	109. अल-काफ़िरून	525
80. अबस	509	110. अन-नस्र	525
81. अत-तकवीर	510	111. अल-लहब	525
82. अल-इनफ़ितार	511	112. अल-इख़लास	525
83. अल-मुतफ़िफ़ीन	512	113. अल-फ़लक़	526
84. अल-इनशिकाक़	513	114. अन-नास	526

कुरआन: किताबे-दावत

कुरआन खुदा की किताब है. कुरआन की असल हैसियत यह है कि वह किताबे-दावत है. हर किताब का एक मौजू होता है और कुरआन का मौजू यह है कि खुदा के तख्लिकी मंसूबे से इंसान को आगाह किया जाए. यानी इंसान को यह बताया जाए कि खुदा ने यह दुनिया किस लिए बनाई है. इंसान को ज़मीन पर बसाने का मक़सद क्या है? मौत से पहले के दौर-हयात में खुदा को इंसान से क्या मतलूब है? और मौत के बाद के दौर-हयात में इंसान के साथ क्या पेश आने वाला है? इंसान एक अब्दि मख़लूक है. इंसान का सफ़रे-हयात मौत के बाद भी जारी रहता है. कुरआन इस पूरे सफ़रे-हयात के लिए एक रहनुमा किताब की हैसियत रखता है.

दावते-इलल्लाह

अल्लाह की तरफ़ से जितने भी पैग़म्बर आए, उन सब का वाहिद मिशन 'दावते-इलल्लाह' था. किसी भी पैग़ंबर का मिशन इसके अलावा दूसरा नहीं था. सभी पैग़ंबरों ने इंसानों को खुदा के तख़्लिकी प्लन (creation plan) से आगाह किया. उन्होंने पूरी ख़ैरखाही के साथ इंसान को उसका मक़सदे-हयात बताया. यह सिलसिला हज़रत आदम से शुरू हुआ, यहां तक कि 620 इ. में मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह बिन अब्दुल मुतल्लिब को अल्लाह तआला ने अपना आखिरी पैग़म्बर बनाकर भेजा और कुरआन की शक़ल में क्रयामत तक के इंसानों की रहनुमाई के लिए हिदायतनामा अता किया और उसकी पूरी-पूरी हिफ़ाज़त फ़रमाई. हज़रत मुहम्मद (स.) के बाद पैग़म्बरों के आने का सिलसिला तो

बंद हो गया, लेकिन इंसानों के पैदा होने का सिलसिला बदस्तूर जारी है, और क्रयामत तक जारी रहेगा.

इसी लिए खत्मे-नबुवत के बाद, कारे-नबुवत को जारी रखना 'उम्मत-मुहम्मदी' का नागुजीर फ़रिज़ा है. उम्मत के लिए इस काम में दूसरा option नहीं.

लेकिन बाद को उम्मत में ज़वाल शुरू हुआ और अब वह अपनी इन्तेहा को पहुँच चुका है. इसी के नतीजे में उम्मत नसली दीनदारी पर आ गई और दावत के नागुजीर फ़रिज़े को तकरीबन-तकरीबन भुला बैठी. आज उम्मत के बेशतर अफ़राद को इस फ़रिज़े का शऊर ही नहीं. इस उम्म में exception हो सकता है, लेकिन उम्मत की आम हालत यही है.

आज दुनिया भर में लाखों-करोड़ों मसजिदें हैं. लेकिन वह दावत के मराकिज़ नहीं है. कितने ही मदरसे हैं, लेकिन वह दाई तैयार करने के कारखाने साबित नहीं हो रहे हैं. दीन के नाम पर दुसरी-दुसरी चीज़ों की बहुत धूम है, बहुत चर्चा है, लेकिन उम्मत का क़ाफ़िला दावती शऊर से ग़ाफ़िल है.

कुरआन की असल हैसियत

कुरआन : एक दावती किताब

कुरआन की असल हैसियत यह है कि वह एक दावती किताब है. जिसमें इन्सान को ख़ालिक का परिचय कराया गया है, जिसमें इन्सान को ख़ालिक के मक़सदे-तख़लीक़ से आगाह किया गया है. कुरआन इन्सान को हक़ की तरफ़ बुलाता है, वह इन्सान को ज़न्नत की तरफ़ बुलाता है, जो इन्सान की हक़ीक़ी मंज़िल है, इसी तरह कुरआन इन्सान को यह भी बताता है कि हक़ का इन्कार करने का क्या अंजाम होने वाला है. इसी तरह कुरआन यह भी बताता है कि ख़ालिक को इन्सान से कैसी ज़िंदगी मतलूब है. वह कौन सा रास्ता है जिस पर चलकर इन्सान ख़ालिक का मतलूब बंदा बन सकता है.

लेकिन बाद को बदकिस्मती से उम्मत के अंदर 'कुरआन' की यह असल हैसियत गुम हो गई. जिसके बारे में पेशगी तौर पर कुरआन और हदीस में पेशीनगोई मौजूद है. कुरआन में है कि रसूलुल्लाह (स.) अल्लाह की अदालत में बाद के लोगों के बारे में यह गवाही दें कि 'मेरी क़ौम ने इस कुरआन को किताबे-महज़ूर (यानी पूरी तरह छोड़ी हुई, पीठ पीछे डाली हुई किताब) बना दिया था.'

कुरआन की असल हैसियत दावती किताब की है, जबकि मौजूदा ज़माने में मुसलमानों ने दावत को छोड़ रखा है. यही कुरआन को किताबे-महज़ूर बनाना है. इसी तरह हदीस में आया है कि दीन जब शुरू हुआ तो वह अजनबी था बाद को वह अजनबी हो जाएगा.

कुरआन पूरी तरह महफूज़ हालत में मौजूद होते हुए भी ऐसा होने वाला है इसकी पेशीनगोई हदीस में मिलती है. इसी तरह दूसरी एक हदीस में है कि बाद के ज़माने में मसजिदों में भीड़ होगी, लेकिन वह हिदायत से ख़ाली होगी.

ऐसा क्यों होगा? ऐसा इसलिए होगा, क्योंकि उम्मत में कुरआन की असल हैसियत गुम हो चुकी होगी.

मसजिदों में रमज़ान में ख़त्मे-कुरआन होता है, शबीना का एहतमाम होता है और रोज़ पाँच नमाज़ों में कुरआन पढ़ा जाता है। इसी तरह घरों में मौक़ा-ब-मौक़ा कुरआन-ख़ानी का एहतमाम होता है। फिर क्या वज़ह है कि कुरआन के मानने वाले कुरआन को किताबे-महज़ूर बना देंगे। बज़ाहेर हिदायत के माहौल में रहते हुए और कुरआन को पढ़ते-सुनते हुए भी वह भीड़ हिदायत से क्यों खाली होगी।

इसकी वज़ह यह है कि हमने कुरआन के ज़ाहिर को पकड़ा है और उसकी असल हैसियत को छोड़ रखा है। हमने उसके अलफ़ाज़ को तो पकड़ा है, लेकिन तदब्बुर को छोड़ रखा है। नतीजतन अमली ज़िंदगी में हमारा कुरआन से ताल्लुक़ बाक़ी नहीं रहा। और न हम उस कुरआन के दाई बन सके जो **हुदह्लिन्नास** (यानी सारे इंसानों के लिए किताबे-हिदायत) है।

कुरआन की इस असल हैसियत को वाज़ेह करने की 'अल-कुरआन पब्लिकेशन' की यह कोशिश इस मक़सद के तहत है कि कुरआन का पढ़ने वाला और उसका सुनने वाला उसका दाई बन जाए।

पैग़ंबर का मिशन सिर्फ़ दावत

‘शायद तुम उनके पीछे ग़म से अपने को हलाक कर डालोगे, अगर वे इस बात पर ईमान न लाएं.’ (कुरआन 18:6)

कुरआन के इस बयान से वाज़ेह है कि पैग़ंबर का मिशन ना सोशल-वर्क था, ना मिल्ली-वर्क था, ना कम्यूनिटी-वर्क था, बल्कि अपने हलाक़त के लेवल तक जा कर लोगों की आख़िरत की भलाई चाहना था।

कुरआन के मुताबिक़ कामयाब वह नहीं है जो दुनिया में खुश व ख़ुर्म रहे, उसे दुनिया में किसी मसले से दोचार होना ना पड़े, बल्कि कामयाब वह है जो आख़िरत में कामयाब हो। वाज़ेह है कि ईमान लाने का ताल्लुक़ आख़िरत की कामयाबी से है।

दुनिया में क़यामत तक मसाएल रहेंगे। चाहे मसाएल को ख़त्म करने के लिए कितने ही N.G.O.s खड़े हो जाएं। वह मसाएल को पूरी तरह से कभी ख़त्म नहीं कर सकते, क्योंकि इस दुनिया के लिए खुदा का यह मंसूबा है कि इंसान इस दुनिया में मसाएल के बीच रहे। इस छोटी सी ज़िंदगी में ख़िदमते-ख़ल्क़ अगरचे अच्छा काम है, लेकिन वह पैग़ंबर की ज़िंदगी का मिशन नहीं हो सकता। पैग़ंबर लोगों की आख़िरत की भलाई के लिए तड़पता है, जो हक़ीक़ी भलाई है। हदीस में आया है कि

‘जो मैं जानता हूँ अगर वह तुम जान लो, तो तुम हंसोगे कम और रोओगे ज़्यादा, तुम्हें अपनी बीबीयों में लज़ज़त नहीं आएगी.’

इसी तरह दूसरी हदीस में आया है कि

‘मौत को कसरत से याद करो जो लज़ज़तों को ढा देती है.’

तो इससे मालूम हुआ कि इस मुख़तसर सी दुनिया में इंसान का लज़ज़तों के पीछे दौड़ना खुदा को मतलूब नहीं, लेकिन खुदा को यह मतलूब है कि इंसान मौत और मौत के बाद आने वाले सबसे बड़े मसले की

तरफ सबसे ज्यादा मुतवज्जह रहे, लेकिन इंसान उसके उलटे रुख पर चल रहा है कि वह सबसे बड़े मसले के ताल्लुक से सबसे ज्यादा बेफ़िक्र है, यही इंसान की बेहिंसी है जिसने पैगंबर को बेचैन कर रखा था। पैगंबर नूह (अ.) के ताल्लुक से कुरआन में आया है,

नूह ने कहा कि ऐ मेरे रब! मैंने अपनी क़ौम को शब व रोज़ पुकारा. मगर मेरी पुकार ने उनकी दूरी ही में इज़ाफ़ा किया. और मैंने जब भी उन्हें बुलाया कि तू उन्हें माफ़ कर दे तो उन्होंने अपने कानों में उंगलियां डाल लीं और अपने ऊपर अपने कपड़े लपेट लिए और ज़िद पर अड़ गए और बड़ा घमंड किया. फिर मैंने उन्हें एलानिया पुकारा. फिर मैंने उन्हें खुली तब्लीग की और उन्हें चुपके से समझाया. (कुरआन 71:5-9)

इससे वाज़ेह होता है कि खुदा का पैगंबर रात-दिन किस काम में मसरूफ़ रहता है. वह रात-दिन किन फ़िकरों में जीता है. वह काम दावत का काम है, वह फ़िकरें इंसानों की हकीक़ी ख़ैरखाही की फ़िकरें हैं. ना कि कम्यूनिटी-वर्क, ना सोशल-वर्क, ना मिल्ली-वर्क.....

यह मामला सिर्फ़ हज़रत नूह का नहीं था. बल्कि यही सारे पैगंबरों का मामला रहा है. इससे वाज़ेह है कि पैगंबर लोगों की हिदायत के लिए किस तरह तड़प रहा था.

दुनिया में ज़रूरतमन्द की मदद करना एक मतलूब और बाए-से-अजर काम है, लेकिन वह दाई का मिशन नहीं हो सकता. इसलिए कुरआन में जिन दाइयों का ज़िक्र है उन सब का वाहिद मिशन सिर्फ़ दावत था.

कम्यूनिटी-वर्क या सोशल-वर्क को अपने ज़िंदगी का मिशन बनाना खुदा के तख़्लिकी मंसूबे के ऐन खिलाफ़ है. क्योंकि खुदा के मंसूबे के मुताबिक़ इस इम्तिहानी दुनिया में problems हमेशा रहेंगे. Problemfree ज़िंदगी सिर्फ़ आखिरत में मुमकिन है.

अब चूंकि पैगंबर आने वाले नहीं हैं, ऐसी सूरत में पैगंबर का सच्चा पैरवीकार (follower) कौन हो सकता है? वही जो पैगंबर के मिशन को आगे बढ़ाए.

सारे पैगंबरों की अहमतरिन सुन्नत सिर्फ़ दावत

कुरआन में जितने भी नबियों का ज़िक्र है, उससे पता चलता है कि कुरआन नबियों के दावती किरदार का ज़िक्र कर रहा है, न कि उनके ताल्लुक से मालूमाती बातें बयान कर रहा है.

कुरआन नबियों का ज़िक्र करते हुए यह नहीं बताता कि कौनसे नबी कहां पैदा हुए, वह कौनसी ज़बान बोलते थे, उनके वालिद का नाम क्या था,..... बल्कि कुरआन नबियों के दावती सरगर्मियों को बयान करता है. जैसे.....

हमने तुम्हारी तरफ़ 'वही' (ईश्वरीय वाणी) भेजी है जिस तरह हमने नूह और उसके बाद के नबियों की तरफ़ 'वही' भेजी थी. हमने इब्राहीम और इस्माईल और इस्हाक़ और याकूब और औलादे-याकूब और ईसा और अय्यूब और यूनस और हारून और सुलैमान की तरफ़ 'वही'

भेजी थी. और हमने दाऊद को ज़बूर दी. और हमने ऐसे रसूल भेजे जिनका हाल हम तुम्हें पहले सुना चुके हैं और ऐसे रसूल भी जिनका हाल हमने तुम्हें नहीं सुनाया. और मूसा से अल्लाह ने कलाम किया. **अल्लाह ने रसूलों को खुशखबरी देने वाले और डराने वाले बनाकर भेजा, ताकि रसूलों के बाद लोगों के पास अल्लाह के मुक़ाबले में कोई हुज्जत बाक़ी न रहे. अल्लाह ज़बरदस्त है, हिकमत वाला है.** (4:163-165)

ऐ मेरे जेल के साथियो! क्या जुदा-जुदा कई माबूद (पूज्य) बेहतर हैं या अल्लाह अकेला ज़बरदस्त. (कुरआन 12:39)

और जब मूसा ने अपनी क्रौम से कहा कि ऐ मेरी क्रौम! तुमने बछड़े को माबूद बनाकर अपनी जानों पर जुल्म किया है. अब अपने पैदा करने वाले की तरफ़ मुतवज्जह हो जाओ (कुरआन 2:54)

...नूह ने कहा, ऐ मेरी क्रौम! अल्लाह की इबादत करो. उसके सिवा तुम्हारा कोई माबूद नहीं. मैं तुम पर एक बड़े दिन के अज़ाब से डरता हूँ. (07:59)

इब्राहीम ने कहा, क्या तुम खुदा के सिवा ऐसी चीज़ों की इबादत करते हो जो तुम्हें न कोई फ़ायदा पहुँचा सकें और न कोई नुक़सान. अफ़सोस है तुम पर भी और उन चीज़ों पर भी जिनकी तुम अल्लाह के सिवा इबादत करते हो. क्या तुम समझते नहीं. (21:66-67)

और आद की तरफ़ हमने उनके भाई हूद को भेजा. उन्होंने कहा, ऐ मेरी क्रौम! अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई माबूद (पूज्य) नहीं. (07:65)

और समूद की तरफ़ हमने उनके भाई सालेह को भेजा. उन्होंने कहा, ऐ मेरी क्रौम! अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई माबूद (पूज्य) नहीं. (07:73)

और मदयन की तरफ़ हमने उनके भाई शुऐब को भेजा. उसने कहा, ऐ मेरी क्रौम! अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा कोई तुम्हारा माबूद (पूज्य) नहीं. (07:85)

अब चूँकि नबी आने वाले नहीं हैं. और इंसानों का पैदा होना बदस्तूर जारी है और क्रयामत तक

जारी रहेगा, तो इन इंसानों तक यह पैगाम कौन पहुँचाएगा कि, **‘ऐ इंसानों! अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा कोई तुम्हारा माबूद नहीं (तुम्हारा ख नहीं)’** अब बिलाशुबहा यह जिम्मेदारी **‘उम्मेते मुहम्मदी’** की है, लेकिन उम्मत ने इस सबसे बड़ी जिम्मेदारी को सबसे ज्यादा भुला रखा है. उम्मत को यह खूब समझ लेना चाहिए कि उम्मत खुदा की नज़र में **‘उम्मेते मुहम्मदी’** उसी वक़्त करार पाएगी, जब वह नबियों वाला काम अंजाम देगी.

दावत: इन्सानियत को बचाने का मिशन

एक अंधा आदमी अगर कुएँ की तरफ़ बढ़ रहा हो और यह अंदेशा हो कि अगर वह इसी तरह चलता रहा तो चंद लमहों में वह कुएँ के अंदर गिर जाएगा तो ऐसी हालत में फ़िखाअ का मुत्तफ़िक्क अलै मसला (इस्लामी शरीअत का सर्वसम्मत नियम) है कि देखने वाले को चाहिए की वह दौड़ कर उसे कुएँ में गिरने से बचाए. उस वक़्त यह देखने वाला शख्स अगर अपना रास्ता तय कर रहा हो तो उस पर लाज़िम है कि वह अपना रास्ता छोड़ दे. अगर वह खाना खा रहा हो तो उस को चाहिए की वह अपना खाना छोड़कर उस अंधे आदमी की तरफ़ दौड़े. अगर वह नमाज़ पढ़ रहा हो तो ज़रूरी है कि वह नियत तोड़कर वहाँ पहुँचे और उसको बचाए. यह भी मसला है कि ऐसे मौक़े पर उसको सिर्फ़ कुआँ-कुआँ कहना चाहिए. ऐसे मौक़े पर उसे अपने मुँह से दूसरी कोई बात नहीं निकालना चाहिए, ताकि उस अंधे आदमी को फ़ौरन बाख़बर किया जा सके.

शरीयत का यह मसला उस वक़्त है जबकि किसी एक शख्स के लिए दुनिया के किसी कुएँ में गिरने का अंदेशा हो. अब अगर पूरी इन्सानियत अपनी बेख़बरी की बिना पर आख़िरत के ख़ौफ़नाक कुएँ में गिरने जा रही हो तो ऐसी हालत में क्या इस्लाम के नज़दीक यह मसला नहीं होगा? यकीनन वह मसला है. इसलिए किसी भी चीज़ को उज़्र बनाए बग़ैर (कोई भी बहानेबाज़ी किए बग़ैर) इंसानी क़ाफ़िलों की तरफ़ दौड़ा जाए. उनको आने वाले भयानक ख़तरे से बाख़बर किया जाए, इससे पहले कि वे उसमें गिर कर हलाक हो चुके हों.

यही वह जिम्मेदारी है जिसके एहसास ने पैग़म्बरे-इस्लाम (स.) को सारी ज़िंदगी बेताब कर रखा था. आप हर लमहा बेचैन रहते थे. आपको नज़र आ रहा था कि लोग परवानों की तरह आग के गढ़े में गिर रहे हैं. आप बेताब हो कर उनकी तरफ़ दौड़-पड़ते थे, ताकि उन्हें उस बुरे अंजाम से बचा सकें.

इस मामले में यही एहसास आपकी उम्मत के हर फ़र्द (शख्स) को होना चाहिए. लोगों को चाहिए की इस मामले में वह इतना ज़्यादा बेचैन हो जाएं कि उनके लिए किसी चीज़ में कोई लज़्ज़त बाक़ी न रहे. वह महसूस करने लगें कि दूसरों को अगर उन्होंने जहन्नम से बचाने की कोशिशें नहीं की तो खुद उनके लिए भी जहन्नम से बचने की कोई उम्मीद नहीं.

जो इस्लाम यह कहे कि एक आदमी अगर कुएँ में गिर रहा है तो तुम अपनी नमाज़ छोड़कर उसे बचाने के लिए दौड़ो, वही इस्लाम क्या यह हुक्म देगा कि जब तक तुम सारे मुसलमानों को नमाज़ी न

बना लो, उस वक़्त तक इसके बारे में कुछ न सोचो कि दुनिया के लोग अपनी बेखबरी की बिना पर आखिरत के गढ़े में गिर रहे हैं। जिस इस्लाम की तालीम यह हो कि माशी मसरूफ़ीयत (रोजगार प्राप्ति की व्यस्तता) को छोड़कर अंधे को कुएँ से बचाने के लिए दौड़ो, वहीं इस्लाम क्या यह हुक्म देगा कि जब तक मुसलमानों के माशी हालात सुधार न लो उस वक़्त तक तुम्हें अहले-दुनिया को हलाकत से बचाने की फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं। जो इस्लाम यह कहे कि तुम अपना रास्ता रोक कर अंधे को बचाने की कोशिश करो, वही इस्लाम क्या यह हुक्म देगा कि जब तक मुसलमानों के मामलात सुधार न जाएं, उन्हें दूसरी क़ौमों की नजाते-आखिरत के लिए फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं।

मगर ऐसा नहीं है। हकीकत यह है कि इस्लाम ने बहुत ज़्यादा ज़ोर देकर यह हुक्म दिया है कि अहले-इस्लाम दूसरों की नजात को खुद अपना मसला बनाएं। वे तर्जीह की बुनियाद पर इस दावती काम के लिए सरगर्म हों। यहां तक कि अगर ज़रूरत हो तो दूसरे कामों को छोड़कर इस काम को अंजाम दें। अगर अहले-इस्लाम दूसरों की नजात के लिए न उठें तो सख़्त अंदेशा है कि खुद उनकी अपनी नजात भी खुदा के यहां मुशतबह (संदेहास्पद) हो जाएगी।

एक शरीफ़ आदमी किसी अंधे को कुएँ में गिरता हुआ देखे तो वह दीवानावार उसको बचाने के लिए दौड़ पड़ेगा। इसी तरह अहले-इस्लाम पर फ़र्ज़ है कि जब वह देखें कि दुनिया की क़ौमों ज़िंदगी की हकीकत और उसके अंजाम से बेखबर होकर तबाही के गढ़े की तरफ़ चली जा रही हैं तो वह आखिरी हद तक तड़प उठें, वह हर मस्लिहत को नज़रंदाज़ कर दें और हर उज़्र को ग़ैर-अहम क़रार देकर पूरी तरह इसके लिए सरगर्म हो जाएं कि वे दुनिया की क़ौमों को हिदायत का पैग़ाम पहुंचा दें। वह उनको खुदा की रहमतों के साये में जगह दिलाने के लिए अपनी सारी कोशिशें सर्फ़ कर दें।

खतरा अपने आप में एलान का तक्राज़ा करता है। एक आदमी कुछ लोगों के साथ चल रहा हो और अचानक वह ज़हरीले सांप को देखे तो यह इंसानी नफ़िसयात के खिलाफ़ है कि देखने वाला सिर्फ़ अपने आपको सांप से बचाने पर क़िनाअत कर ले (संतुष्ट हो जाए)। और दूसरे हमसफ़र लोगों को आगाह न करे। यक़ीनी तौर पर ऐसा होगा कि देखने वाला एक तरफ़ अपने आपको उससे बचाएगा और दूसरी तरफ़ वह सांप-सांप के अलफ़ाज़ में चीख पड़ेगा, ताकि दूसरे लोग भी उससे बच जाएं।

एक ईमानवाले का यह यक़ीन कि मौत के बाद फ़ौरन क़यामत की हौलनाकी का मामला पेश आने वाला है, यही यक़ीन उसको मजबूर करेगा कि वह एक तरफ़ अपने आपको उससे बचाने की पूरी कोशिश करे। और दूसरी तरफ़ ऐन उसी के साथ चीख कर एलान करे कि ऐ लोगो! अनक़रीब एक भयानक मसले से तुम्हारा सामना होने वाला है। मौत से पहले उसकी तैयारी कर लो, ताकि मौत के बाद अपने आपको उससे बचा सको।

दावत सबसे बड़ा जिहाद, दावत सबसे बड़ी सुन्नत

कुरआन की एक मक्की सुरत में यह आयत आई है ‘.....इस (कुरआन) के ज़रिये से उनके

साथ जिहाद करो- बड़ा जिहाद.' (25:52) वाज़ेह रहे कि मक्की दौर पूरी तरह दावत का दौर था, उसमें जंग व खिताल की बिल्कुल इजाज़त नहीं थी. इससे मालूम हुआ कि अल्लाह के नज़दीक सबसे बड़ा जिहाद कुरआन का पैग़ाम इंसानों तक पहुँचाना है. इस सिलसिले की कोशिशों को ही सबसे बड़ा जिहाद कहा गया है.

रसूलुल्लाह (स.अ.) की सबसे अहम सुन्नत क्या है? वह सिर्फ़ दावत है, कुरआन की सूरह नंबर 18, आयत नंबर 6 और सूरह नंबर 26, आयत नंबर 3 में यह इरशाद हुआ है कि 'शायद तुम उनके पीछे ग़म से अपने को हलाक कर डालोगे, अगर वे इस बात पर ईमान न लाएं.'

इसी तरह हदीस में आया है कि 'लोग जहन्नम में गिर रहे हैं और मैं उनकी कमर पकड़ कर पीछे खींच रहा हूँ.' कुरआन और हदीस के इन बयानात से वाज़ेह होता है कि आपकी तर्ज़ीह (priority) का रख किधर था. आपने अपने मिशन में किस चीज़ को सबसे ज़्यादा तर्ज़ीह दी थी. वह दावत है, सिर्फ़ दावत.

यही सबसे बड़ी सुन्नत बाद के ज़माने में उम्मत में गुम होती चली गई. जो इस सबसे बड़ी सुन्नत को दरयाफ़्त करेगा और उसे अमलन ज़िंदा करेगा, अल्लाह के यहां उसे इन्शाअल्लाह बहुत बड़ा अज़्र मिलेगा.

जिंदगी की हक़ीक़त और उसके अंजाम से बेख़बर

किसी के बारे में डॉक्टर अगर यह रिपोर्ट दे कि आपकी दोनों किडनियाँ और लिव्हर काम करना बंद कर चुके हैं तो उस शख्स के और उसके मुताल्लकीन के होश उड़ जाएंगे. लेकिन जहां तक जिंदगी की हक़ीक़त और उसके अंजाम का ताल्लुक है मामला इसके बिल्कुल बरअक्स है. पैग़ंबर ने खुदा की तरफ़ से जो ख़बर दी है उसपर न मौजूदा मुसलमानों के होश उड़ रहे हैं, फिर ग़ैर-मुस्लिम तो ग़ैर-मुस्लिम, उन तक यह ख़बर पहुंची ही नहीं. जबकि आख़िरत का मसला किडनियाँ और लिव्हर फेल हो जाने से बेशुमार गुना बड़ा है. आख़िरत में किसी के बारे में जब यह एलान होगा कि फलां शख्स को खुदा ने हमेशा के लिए अपनी रहमत से दूर कर दिया है. उस शख्स के लिए यह कितना ख़तरनाक लमहा होगा. खुदा के मुक़ाबले में कोई उसका मददगार नहीं होगा. इसलाह की या वापसी की कोई सूरत नहीं होगी. कैसी अजीब महरूमी होगी वह! कुरआन कह रहा है.....

जिस दिन आसमान तेल की तलछट की तरह हो जाएगा. और पहाड़ धुनके हुए ऊन की तरह.

और कोई दोस्त किसी दोस्त को न पछेगा. वे उन्हें दिखाए जाएंगे.

मुजरिम चाहेगा कि काश उस दिन के अज़ाब से बचने के लिए अपने बेटों और अपनी बीवी और अपने भाई और अपने कुंवे को जो उसे पनाह देने वाला था और तमाम अहले-ज़मीन को फ़िदये (मुक्ति मुआवज़ा) में देकर अपने को बचा ले. **(70:8-14)**

इन्हीं बातों को सोच कर खुदा की पकड़ के अंदेशे से सहाबा कांपते थे और दूसरे इंसानों को इस मसले से आगाह करते थे. लेकिन बाद को नसली और रस्मी दीनदारी के चलते मौजूदा मुसलमानों की

अकसरीयत को न खुद के आखिरत की फ़िक्र है और न दूसरों के आखिरत की। मुसलमानों की बेहतरी इसी में है कि वह इस ग़फ़लत से जागें और खुद की और दूसरों की आखिरत की फ़िक्र करते हुए ज़िंदगी की हकीकत और उसका अंजाम बताने वाली जो किताब उनके पास मौजूद है उसे सारे इंसानों तक पहुंचा दें, क्योंकि यह मसला सारे इंसानों का मसला है।

दावत : इन्सानियत के भटके हुए क़ाफिले को खुदा से जोड़ना

ज़िंदा रहने के लिए इन्सान को ऑक्सिजन की ज़रूरत है। कोई इन्सान यह क्लेम (दावा) नहीं कर सकता कि मुझे ऑक्सिजन की ज़रूरत नहीं है। तो ऐसी सूरत में क्या इन्सान को ऑक्सिजन मेकर और ऑक्सिजन सप्लाईअर की ज़रूरत नहीं है, जबकि इन्सान खुद तो ऑक्सिजन का ख़ालिक नहीं है। लेकिन चीज़ों को फॉर ग्रंटेड लेने वाला इन्सान खुदा के मामले में, यह ग़लती कर रहा है और अमल से यह कह रहा है, मुझे ऑक्सिजन की तो ज़रूरत है, लेकिन मुझे ऑक्सिजन मेकर और सप्लाईअर की ज़रूरत नहीं। मगर हकीकत यह है कि इन्सान को हर ज़रूरी चीज़ से भी ज़्यादा खुदा की ज़रूरत है। ऐसी सूरत में इन्सान खुदा से दूर क्यों है? इसका जवाब यह है कि माहौल के असर के चलते इन्सान के ज़ेहन पर अलग-अलग परदे पड़ जाते हैं। दाई का काम यह है कि पूरी ख़ैरखाही और नसीहत के साथ इन मसनुई (अस्वाभाविक) परदों को हटाने की कोशिश करे। इस तरह भटके हुए इन्सान को खुदा के contact में लाने का नाम ही दावत है।

नोट:- चीज़ों को फॉर ग्रंटेड लेना यानी वाक़यात के पीछे जो गहरी हकीकतें हैं, उन्हें नज़रंदाज़ करना, और उनकी खुदसाख़्ता तबज़ीह करना है।

वह क्या चीज़ है जो दाई को तड़पा देती है?

सूरह कहफ़ में इरशाद हुआ है, 'शायद तुम उनके पीछे ग़म से अपने को हलाक कर डालोगे, अगर वे इस बात पर ईमान न लाएं।' (कुरआन 18:6) दाई ज़िंदगी की हकीकत और ज़िंदगी के अंजाम से आखिरी हद तक बाख़बर होता है। वह दूसरे इन्सानों को इसी चीज़ से पूरी ख़ैरखाही के साथ बाख़बर करता है। इस काम के लिए वह अपने आप को पूरी तरह झोंक देता है, क्योंकि वह जानता है कि कामयाबी आखिरत की कामयाबी है और नाकामी आखिरत की नाकामी है। लेकिन मद् की जानिब से negative response उसको तड़पा देता है। वह यह सोच कर बेचैन होता है कि जो इन्सान चूँटी के काटने को बर्दाश्त नहीं कर पाता – वही इन्सान अपने लिए जहन्नम का ख़तरा मोल ले रहा है। जो इन्सान वक्ती तकलीफ़ से कांप उठता है – वह इन्सान अपने लिए अब्दि बरबादी का सामान कर रहा है। इन्सान मुकम्मल आजिज़ होते हुए भी ख़ालिके-कायनात के मुकाबले में सरकशी का पागलपन कर रहा है। मद् की तरफ़ से negative response के बावजूद वह मद् का आखिरी हद तक ख़ैरखाह बना रहता है। मद् के ताल्लुक से दाई का ज़ेहन हर क्रिस्म की reaction से पाक होता है, वह मद् का हर हाल में सिर्फ़ ख़ैरखाह बना रहता है, जैसे एक माँ हर हाल में अपने बच्चे की ख़ैरखाह होती है।

(मदू:- मदू यानी वह लोग जिन तक खुदा का पैगाम पहुँचाना है और जिन्हें हक़ की तरफ़ बुलाना है)

दावत और दुआ

इस्लाम के इब्तिदाई दौर का वाक़या है कि तुफ़ैल बिन अमरू अद-दौसी मक्का आए उन्होंने पैग़ंबरे-इस्लाम (स.) की ज़बान से कुरआन सुना वह उससे मुतास्सिर (प्रभावित) हुए और इस्लाम क़बूल कर लिया, उसके बाद वह अपने क़बीले दौस में वापिस गए उन्होंने क़बीले के लोगों को दीन की तरफ़ बुलाना शुरू किया, मगर उन लोगों ने सरकशी की और नए दीन को क़बूल करने से इन्कार कर दिया. एक अरसे के बाद तुफ़ैल बिन अमरू दोबारा मक्का आए उन्होंने पैग़ंबरे-इस्लाम (स. अ.) से शिकायत की, ऐ खुदा के रसूल! क़बीले-दौस सरकश हो गया है. आप उसके खिलाफ़ बद-दुआ कीजिए! उसके बाद आप (स.) ने दुआ के लिए हाथ उठाया, तो आप की ज़बान से यह अलफ़ाज़ निकले, 'ऐ अल्लाह! तू क़बीले-दौस को हिदायत दे, ऐ अल्लाह! तू क़बीले-दौस को हिदायत दे.' उसके बाद आप ने तुफ़ैल बिन अमरू से कहा, 'अपनी क्रौम की तरफ़ वापस जाओ, उनको दीने-हक़ की तरफ़ बुलाओ और उनके साथ नरमी का सलूक करो.' (सीरत इब्ने-हश्शाम 1/409)

रिवायात बताती हैं कि उसके बाद तुफ़ैल बिन अमरू दोबारा अपने क़बीले की तरफ़ वापिस गए. रसूलुल्लाह (स. अ.) की नसीहत के मुताबिक़ उन्होंने अपने क़बीले को नरमी व शफ़क़त के साथ इस्लाम की तरफ़ बुलाया, उसका नतीजा यह हुआ कि पूरे क़बीले ने इस्लाम क़बूल कर लिया. हज़रत अबू-हु़रैरा इसी क़बीले दौस से ताल्लुक रखते हैं.

एक मेहरबान बाप अपने बेटे को सरकशी करता हुआ देखे तब भी वह उसके खिलाफ़ बद-दुआ नहीं करेगा. वह सिर्फ़ बेटे की हिदायत के लिए खुदा से दुआ करेगा और उसकी इस्लाह के लिए अपनी मुमकिन कोशिशों को जारी रखेगा. यही मामला दाई का है. दाई वह है जो अपने मदू के हक़ में वह शफ़क़त रखता हो जो बाप के दिल में अपने बेटे के लिए होती है. वह हर हाल में और आखिर वक़्त तक अपने मदू की हिदायत का हरीस बना रहे, अगरचे मदू ने उसके खिलाफ़ कितनी ही ज़्यादतियाँ की हों तब भी.

दावत किसी दाई का ज़ाती अमल नहीं वह खुदा के हुक्म की तामील है. वह बंदों के हक़ में खुदा की नुमाइंदगी है, ऐसी हालत में मदू के खिलाफ़ बद-दुआ की कोई गुंजाइश नहीं. इस मामले में दाई का काम सिर्फ़ यह है कि वह मदू के रक्य्ये को एक-तरफ़ा तौर पर नज़रंदाज़ करते हुए उस तक खुदा का पैगाम पहुंचाए और आखिर वक़्त तक उसकी खैरखाही करता रहे. वह मदू के अंजाम को पूरी तरह खुदा के ऊपर छोड़ दे. दाई का काम सिर्फ़ दावत देना है और मदू के लिए खुदा से दुआ करना है. उसके बाद जो कुछ है तमामतर खुदा का मामला है वही अपनी हिकमत के तहत जैसा चाहेगा वैसा फैसला करेगा.

हदीस में आया है कि आप (स.) ने एक सहाबी को दावती मिशन पर भेजते हुए कहा कि तुम्हारी दावत से एक आदमी का हिदायत पा लेना तुम्हारे लिए सुर्ख़ ऊँटों से ज़्यादा कीमती है. इसका मतलब यह है कि दावत का मामला मदू से पहले खुद दाई का मामला है. दाई के लिए यह एक नफ़ाबर्ख़श तिजारत की

हैसियत रखता है। कोई ताजिर अपने गाहक के खिलाफ़ बद-दुआ नहीं करता। वह आखिरी हद तक उसके लिए पुर-उम्मीद रहता है। वह हमेशा मुसबित (सकारात्मक) जज़्बे के तहत कोशिश जारी रखता है।

यही मामला दाई का है। दाई का ज़ेहन यह होता है कि दावत का अमल करके वह अपने आपको खुदा के इनाम का मुस्तहिक़ (पात्र) बनाए। वह समझता है कि उसकी दावती मुहिम अगर सिर्फ़ कोशिश के दर्जे में रही तब भी उसको कोशिश का भरपूर अज्र मिलेगा, अगर वह मदू के दिल में हिदायत की रोशनी दाखिल करने में कामयाब हो गया तो वह खुदा की नज़र में दोहरे अज्र का मुस्तहिक़ बनेगा। यह एहसास दाई को अपने मदू के हक में ला-महदूद हद तक पुर-उम्मीद बना देता है।

दावत और मदू से मुहब्बत

कुरआन में दावती अमल को ख़ैरखाही का अमल कहा गया है, जैसा कि इरशाद हुआ, 'मैं तुम्हें अपने रब के पैगामात पहुँचा रहा हूँ और तुम्हारा ख़ैरखाह व अमीन हूँ।' (07:68)

ऐसा मुमकिन नहीं है कि आप किसी से नफ़रत करते हैं और साथ ही आप उसके ख़ैरखाह भी हैं। नफ़रत और ख़ैरखाही यह दोनों चीज़ें एक दूसरे की ज़िद (यानी एक दूसरे के विपरीत) हैं। आप को दावती अमल अंजाम देने के लिए उन लोगों से सच्ची मुहब्बत करना पड़ेगा जिन पर आप को दावती अमल अंजाम देना है। आपके दिल में मदू के लिए नफ़रत है तो आप कभी भी दावती अमल अंजाम नहीं दे सकते। जैसा कि अल्लाह तआला ने कुरआन में फ़रमाया, 'हमने किसी के सीने में दो दिल नहीं बनाए, (33:04)' यानी नफ़रत और ख़ैरखाही यह दो चीज़ें एक दिल में एक साथ जमा नहीं हो सकतीं। जिस तरह मुसलमान पर दावत फ़र्ज है उसी तरह मुसलमान पर यह भी फ़र्ज है कि वह मदू से सच्ची मुहब्बत करे। रसूलुल्लाह (स.) को कुरआन में 'रहमतुल्लील-आलमीन' कहा गया है, हम इंसान से नफ़रत करके न दाई बन सकते हैं और न रहमतुल्लील-आलमीन (स.) के उम्मीती बन सकते हैं। किसी भी वजह की बुनियाद पर नफ़रत को जायज़ नहीं करार दिया जा सकता।

जिस तरह आखिरत की नजात के लिए मुसलमान को दावत का अमल अंजाम देना ज़रूरी है। उसी तरह दावत के लिए मदू से सच्ची मुहब्बत करना ज़रूरी है। सच्ची मुहब्बत वह मुहब्बत है जो कोई अपने बेटा-बेटी से करता है। दाई का मिशन इंसान को जहन्नम से बचाने का मिशन है। यह बहुत ज़्यादा संजीदा काम है। जिसमें ना नफ़रत की गुंजाइश है और ना दिखावे वाली मुहब्बत की गुंजाइश।

दावत खुदा को सबसे ज़्यादा मतलूब अमल है। आपको खुदा से मुहब्बत है और खुदा के लिए उसके बंदों से मुहब्बत नहीं है ऐसा नहीं हो सकता। अगर आप खुदा की खातिर इंसान से मुहब्बत नहीं करते हैं, उसको जहन्नम से बचाने की फ़िक्रें नहीं करते हैं। तो इसका मतलब यही होगा कि आपके दिल में खुदा के लिए भी हकीकी मुहब्बत नहीं।

दावत, जिहाद और क़िताल की हक़ीक़त

मुसलमान दावत के फ़रिजे के तालुक़ से बेराबत क्यों हैं? इसकी एक बहुत बड़ी वजह है 'दीन की सियासी ताबीर'. जिसके नतीजे में अकसर मुसलमानों के दिलों में मदू ग़िरोह के तालुक़ से नफ़रत पैदा हो गई. इसी नफ़रत ने उन्हें दावत से दूर कर दिया, क्योंकि कुरआन के मुताबिक़ दावत ख़ैरखाही का काम है.

दीन की सियासी ताबीर और उससे बरामद ग़ैर-दावती नतीजों की कहानी बहुत लंबी है, लेकिन मुख्यतः यह वाज़ेह हो कि किसी भी पैग़ंबर के मिशन का मक़सद सियासी ग़लबा हासिल करना नहीं था. पैग़ंबर का मिशन सिर्फ़ दावत, दावत और दावत था.

हज़रत मूसा और हज़रत हारून (अ. स.) दावती मिशन के तहत फ़िरऔन और उसके दरबारियों के पास भेजे गए. वहां हज़रत मूसा ने दावती तक्ररीर की, जिसमें उन्होंने फ़िरऔन और उसकी क्रौम को तौहीद की दावत दी. अपनी दावत के हक़ में उन्होंने कुछ मौज़ज़ात (miracles) पेश किए. जिस पर फ़िरऔन ने अपने दरबारियों से कहा, 'मूसा अपने जादू के ज़ोर से तुम्हें तुम्हारे मुल्क से निकाल देना चाहते हैं.' फ़िरऔन का यह बयान सरासर झूठ पर मबनी (आधारित) था, क्योंकि हज़रत मूसा ने खुद अपनी दावती तक्ररीर में बनी-इसराईल को लेकर मिस्त्र से चले जाने की बात कही थी. फिर जब अल्लाह तआला ने फ़िरऔन और उसकी क्रौम को समुंदर में ग़र्क़ कर दिया तो हज़रत मूसा चाहते और उनका मिशन अगर सियासी मिशन होता तो वह फ़िरऔन के मुल्क पर क़ाबिज़ हो जाते, जबकि वह अपनी क्रौम को लेकर मिस्त्र से निकल गए. इन कुरआनी बयानात के पसमंज़र में यह बात वाज़ेह होती है कि पैग़ंबर के दावती मिशन को सियासी मिशन बताना फ़िरऔनियत के सिवा और कुछ नहीं.

इसी तरह कुरआन में मुख़्तलिफ़ पैग़ंबरों का यह बयान है कि 'मैं तुम से कोई बदला नहीं चाहता' (यानी मेरा तुम से किसी भी तरह का मफ़ाद वाबिस्ता नहीं है, न सियासी, न ग़ैर-सियासी).

इसी तरह अगर रसूलुल्लाह (स.अ.) का मिशन सियासी मिशन होता तो आप मक्का के मुशरिक सरदारों की सियासी इक्तेदार की पेशकश को ना ठुकराते जो उन्होंने आपसे की थी. उन्होंने यह पेशकश की थी कि अगर आप सियासी इक्तेदार चाहते हों तो हम वह आपको देने के लिए तैयार हैं, बशर्ते कि आप इस दावती मिशन को छोड़ दें. इसपर आपने यह कहते हुए उसे ठुकरा दिया कि मक्का के सरदार मेरे दाहिने हाथ पर सूरज और बाएं हाथ पर चांद भी लाकर रख दें तब भी मैं इस दावती मिशन को छोड़ नहीं सकता.

रसूलुल्लाह (स.अ.) की ज़िंदगी की आखिरी और अहमतरिन तक्ररीर इस्लामी तारिक़ में खुतबे-हज्जतुल-विदा के नाम से मशहूर है, इस मौके पर खुतबा (व्याख्यान) देते हुए आपने यह नहीं फ़रमाया कि क्या मैंने मक्का फतह नहीं किया? क्या मैंने मदीने में इस्लामी हुकूमत क़ायम नहीं की? क्या मैंने अरब को फ़तह नहीं कर लिया, अब तुम अज़म को फतह कर लो? बल्कि आपने यह फ़रमाया कि क्या मैंने तुम तक अल्लाह का पैग़ाम पहुंचा दिया? इस सवाल पर हाज़रीन ने कहा, 'हां, आपने पहुंचा

दिया.' फिर रसूलुल्लाह (स.अ.) ने कहा, 'हाज़िर, ग़ैर-हाज़िर को पहुंचा दे (यानी जिन तक अल्लाह का पैग़ाम नहीं पहुंचा उन तक पहुंचा दें).'

पैग़ंबर का मिशन सिर्फ़ दावत होता है इसकी एक आला मिसाल हज़रत उमर बिन अब्दुल-अज़ीज़ के ज़माने के एक वाक़ये में मिलती है. आपके दौरे-ख़िलाफ़त में इस्लाम तेज़ी से फैल रहा था. इस पर आपके ज़ेरे-हुकूमत एक सूबे के गव्हर्नर ने आपको यह पैग़ाम भेजा कि ऐ अमीरुल-मोमिनीन! हमारे इलाक़े में इस्लाम बहुत तेज़ी से फैल रहा है. अगर इसी तरह फैलता रहा तो जिज़िया (इस्लामी हुकूमत में ग़ैर-मुस्लिमों से लिया जाने वाला tax) के महसूल में बहुत कमी आ जाएगी. इस पर जवाब देते हुए हज़रत उमर बिन अब्दुल-अज़ीज़ ने गव्हर्नर को लिखा कि तेरा बुरा हो, तेरा बुरा हो, तेरा बुरा हो. मुहम्मद (स.) जिज़िया वसूल करने के लिए नहीं आए थे.

लफ़्ज़े-जिहाद कुरआन में जंग के लिए कहीं भी इस्तेमाल नहीं हुआ है. जंग के लिए कुरआन में क़िताल यह लफ़्ज़ आया है. जिहाद का मतलब आला दीनी मक़सद के लिए ज़दोज़हद करना है, और वह आला अमल सिर्फ़ दावत है. इसी लिए कुरआन में दावत को जिहादे-कबीर यानी बड़ा जिहाद कहा गया है. कुरआन में है कि तुम इस कुरआन के साथ बड़ा जिहाद करो. (25:52) कुरआन एक फ़िक्कि किताब है, कुरआन कोई लड़ाई का हथियार नहीं जिसके साथ जंग की जा सके. इससे यह बात वाज़ेह होती है कि कुरआन की दावत को ही ख़ुदा बड़ा जिहाद कह रहा है.

जहां तक इस्लामी क़िताल का तालुक़ है, वह एक नागुज़ीर और दिफ़ाई जंग है जो एक क़ायम-शुदा हुकूमत का काम है. जैसा की कुरआन में आया है...

- क्या तुम न लड़ोगे ऐसे लोगों से जिन्होंने अपने अहद तोड़ दिए और रसूल को निकालने की ज़सारत (दुस्साहस) की और वही हैं जिन्होंने तुम से जंग में पहल की.... (09:13)
- इज़ाज़त दे दी गई उन लोगों को जिनसे लड़ाई की जा रही है इस वज़ह से कि उनपर ज़ुल्म किया गया है. और बेशक अल्लाह उनकी मदद पर क़ादिर है. (22:39)

कुरआन के इन बयानात से यह बात वाज़ेह होती है कि अहले-ईमान का असल इक़दाम सिर्फ़ दावत है वह दावत से आज़ाज़ करते हैं और बराबर दावत ही पर क़ायम रहते हैं, लेकिन नागुज़ीर हालात के तहत उन्हें जंग भी करनी पड़ती है मगर उनकी जंग दिफ़ाअ (आत्मरक्षा) के लिए होती है न की ज़ारहीअत (आक्रमण) के लिए.

रसूलुल्लाह (स.) को कुछ नागुज़ीर दिफ़ाई जंगें लड़नी पड़ी. मगर आपका तरीक़ा जंग का तरीक़ा हरगिज़ नहीं था. अगर आपका तरीक़ा जंग का ही तरीक़ा होता तो मक्का में नबुवत के 13 साल आप सन्न व एराज़ के साथ दावती काम क्यों अंजाम देते? और आप व आपके असहाब मुशरिकीन की ज़्यादतियों को क्यों सहते? अगर आपका तरीक़ा जंग का तरीक़ा होता तो आप हिज़रत क्यों

करते? अगर आपका तरीका जंग का तरीका होता तो मुशरिकीन की एक तरफ़ा शर्तों पर आप हुदैबिया का ना-जंग मुआहिदा क्यों करते, जबकि यह मुआहिदा आपके असहाब को ज़िल्लत-आमेज़ (अपमानजनक) मुआहिदा नज़र आ रहा था, जबकि आपके असहाब आपके एक इशारे पर मुशरिकीन पर तूट पड़ने के लिए तैयार थे? इसी तरह अगर आप का तरीका जंग का तरीका ही होता तो फिर अल्लाह तआला ने इस ना-जंग मुआहिदे को कुरआन में खुली फतह क्यों करार दिया? आपका तरीका अगर जंग का तरीका होता तो अहज़ाब के मौक़े पर जंग टालने के लिए आप अपने असहाब के साथ ख़ंदक क्यों खोदते? इसी तरह आपका तरीका अगर जंग का तरीका होता तो आपने मक्का को बिला-जंग क्यों फतह करते, फिर फतह मक्का के बाद आप ने उन इस्लाम के दुश्मनों को क्यों माफ़ कर दिया जिन्होंने आपको बार-बार जंग में उलझाने की कोशिश की थी? इन सारे सवालों का जवाब सिर्फ़ एक है और वह यह कि आप लोगों की गरदनें मारने के लिए नहीं आए थे, बल्कि आप उन्हें अल्लाह से जोड़ने के लिए आए थे, आप उन लोगों को अल्लाह की रहमत के साये में लाने के लिए आए थे जो अल्लाह की रहमत से दूर थे। इसी लिए कुरआन में अल्लाह ने आपको रहमतुल्लील-आलमीन कहा है।

जहां तक मौजूदा ज़माने का तालुक़ है, अब खुद मदू की जानिब से भी जंग का दौर ख़त्म हो चुका है। मौजूदा ज़माना पूरे मानों में दावत का दौर है। मौजूदा ज़माने में दौरे-जबर का खात्मा हो चुका है। मौजूदा ज़माना पूरी तरह दौरे-आज़ादी है। अब दाई के लिए आखिरी वक़्त आ गया है कि वह पूरी तरह अपने आपको दावत में झोंक दे।

दावत के काम में जान व माल लगाना

कुरआन में इरशाद हुआ है, 'मोमिन तो बस वे हैं जो अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाए फिर उन्होंने शक नहीं किया और अपने माल व अपनी जान से अल्लाह के रास्ते में जिहाद किया, यही सच्चे लोग हैं।' (कुरआन 49:15)

इसी तरह दूसरी जगह इरशाद हुआ है, '.....इस (कुरआन) के ज़रिये से उनके साथ जिहाद करो- बड़ा जिहाद।' (कुरआन 25:52)

इंसान के जान व माल का सबसे बेहतर और मतलूब इस्तेमाल दावत के ही काम में हो सकता है, क्योंकि दावत खुदा को सबसे ज़्यादा मतलूब काम है। दावत खुदा की मदद करना है। दावत सारे पैग़म्बरों की सबसे बड़ी सुन्नत है। कुरआन के मुताबिक़ दावत सबसे बड़ा जिहाद है। दावत इंसानों की सबसे बड़ी ख़ैरखाही है। दावत इंसानों को जहन्नम के रास्ते से हटा कर, उन्हें जन्नत के रास्ते पर लाना है। उन्हें अब्दि (eternal) बरबादी से हटा कर अब्दि कामयाबी की तरफ़ लाना है। दावत में ही इंसानों की अब्दि (यानी हमेशा की) बेहतरी का राज़ छुपा हुआ है। ऐसी सूरत में दाई के जान व माल का सबसे बेहतर इस्तेमाल कहां हो सकता है, यह बात कोई भी इंसान अपने कॉमन-सेन्स से समझ सकता है।

दावत ही वह वाहिद अमल है जिसमे इंसान अपना जितना भी जान व माल लगाए वह कम है.

सबसे बड़ा इनाम सिर्फ़ दावत पर

सही मुस्लिम की हदीस में आया है कि 'जब कोई बंदा तौबा करके अपने रब की तरफ़ पलटता है तो अल्लाह तआला को उसके इस अमल पर उससे ज़्यादा खुशी होती है कि किसी मुसाफिर का ऊंट सहारा में खो जाए, जिस पर उस मुसाफिर का खाने-पीने का सामान लदा हो, वह मुसाफिर ऊंट को तलाश करने पर उसे ऊंट ना मिले, फिर वह मायूस हो जाए कि उसे अब ऊंट मिलने वाला नहीं है (मायूसी का ऐसा आलम है, जैसा कि उसका सब कुछ खो चुका है.) फिर वह मायूस मुसाफिर अपने ऊंट को अचानक अपने सामने पाता है तो उसके खुशी का ठिकाना नहीं होता.' (इससे भी ज़्यादा खुशी अल्लाह को उस वक़्त होती है जब उसका भटका हुआ बंदा उसकी तरफ़ पलट आता है). (सही मुस्लिम, किताब-37)

इसी तरह की एक मिसाल यह है कि किसी का 3-4 साल का बेटा किसी बड़े शहर में या किसी भीड़ में खो जाए और वालिदैन अपने बच्चे को खोज रहे हों और बच्चा रोते हुए अपने वालिदैन को पाना चाहता हो, कोई शख्स उस बच्चे को उसके वालिदैन से मिला दे, तो उनके खुशी का कोई ठिकाना नहीं होगा. उस बच्चे के वालिदैन उस शख्स को उनके हैसियत के मुताबिक अच्छे से अच्छा इनाम देना चाहेंगे. तो अंदाज़ा कीजिए कि आप एक भटके हुए खुदा के बंदे को खुदा से मिला देने का ज़रिया बनते हैं और इस अमल पर इनाम देने वाला जब खुदा हो तो खुदा से बेहतर इनाम आपको दूसरा कौन दे सकता है?

एक हदीस में आया है कि

'तुम्हारे ज़रीए से किसी एक शख्स को हिदायत मिले तो यह तुम्हारे लिए हर उस चीज़ से बेहतर है जिस पर सूरज तुलुअ होता है.'

क्या ऐसे अमल का कोई सादा इनाम हो सकता है? हरगिज़ नहीं. इन मिसालों से यह बात वाज़ेह होती है कि दावत खुदा को सबसे ज़्यादा मतलूब अमल है और उसका इनाम सबसे बड़ा है.

सिर्फ़ दावत पर ही ज़ोर क्यों?

किसी के ज़ेहन में यह सवाल पैदा हो सकता है कि सिर्फ़ दावत ही की आयतों को क्यों highlight किया गया. इसका जवाब यह है कि दावत सारे पैग़म्बरों की सबसे अहम-तरीन सुन्नत है. और अब यह जिम्मेदारी 'उम्मत-मुहम्मदी' की है, लेकिन उम्मत की मौजूदा अकसरीयत ने पैग़म्बरों की इस सबसे बड़ी सुन्नत को सबसे ज़्यादा छोड़ रखा है. इस सबसे बड़े फ़रिजे को मौजूदा मुसलमान सबसे ज़्यादा भूल गए हैं.

दावत की अहमतररीन जिम्मेदारी से आज का मुसलमान इस क़दर ग़ाफ़िल है कि अकसरीयत का

यह हाल है कि उन्हें पता नहीं कि गैर-मुस्लिमों में दीने-हक की दावत देना एक नागुजीर फ़रिज़ा है।

दावत के ताल्लुक से इस ग़फ़लत के बावजूद भी उम्मत का कोई फ़र्द ऐसा नहीं हो सकता जो दूसरे दीनी फ़राएज़, दूसरे दीनी आमाल को न जानता हो। मसजिदों में नमाज़ियों की भीड़ है, यहां तक कि जुमआ के दिन मसाजिद छोटे पड़ते हुए नज़र आते हैं। रमज़ान में पांचों नमाज़ों में भीड़ होती है, यहां तक कि तराविह में भी जो कि एक नफ़ील नमाज़ है। रोज़ा और इफ़्तार पार्टियों की हर तरफ़ धूम है। इसी महीने में लोग बढ़-चढ़कर ज़कात का फ़रिज़ा भी अदा करते हैं।

हज का भी यही मामला है, जगह-जगह हज हाऊस कायम हैं, हज कमीटियां कायम हैं, जो जाने से लेकर आने तक हाज़ियों की खिदमत अंजाम देती हैं। रेल्वे-स्टेशन्स और एअरपोर्ट्स पर हाज़ियों को रुखसत करने वालों की भीड़ होती है। जाने से लेकर आने तक फूलों के हारों से हाज़ियों समेत सारे माहौल को सजाया जाता है।

इसी तरह हर मुस्लिम कॉलनी में शानदार मसजिदें बनाई जा रही हैं। शानदार व बुलंद मीनारों को कायम किया जा रहा है। इन सब के बीच जो चीज़ सबसे ज़्यादा गुम हो गई है, वह सारे पैग़म्बरों की सबसे बड़ी सुन्नत दावत है, जो ख़त्मे-नबुवत के बाद उम्मत-मुहम्मदी का सबसे अहम फ़रिज़ा है।

उम्मत के इस ज़वाल की पेशीनगोई कुरआन और हदीस में मौजूद है।

हदीस में आया है : ‘दीन शुरू हुआ तो वह अजनबी था, बाद को फिर वह अजनबी हो जाएगा.....’ इस हदीस से पता चलता है कि दीन दावत से शुरू होता है। बाद को बेरूह दीन का ढांचा तो मौजूद रहेगा, लेकिन दावत का फ़रिज़ा गुम हो जाएगा।

इसी तरह आज मुसलमान दावत को छोड़कर सारे दीनी आमाल में मशगूल हैं। अब सवाल यह है कि उनके यह दीनी आमाल अगर खुद को जहन्नम से बचाने के लिए और जन्नत में जगह पाने के लिए हैं तो फिर क्या वजह है कि उन्हें वह इन्सानियत का बहुत बड़ा काफ़िला क्यों नज़र नहीं आता जो ज़िंदगी की हक़ीक़त और उसके अंजाम से बेख़बर जहन्नम की तरफ़ बढ़ रहा है। दुनिया भर में रोज़ लाखों लोग अपने रब का पैग़ाम जाने बग़ैर मर रहे हैं। यह संगीन सुरते-हाल उन्हें क्यों नहीं तड़पाती?

जैसा कि हदीस में आया है कि लोग जहन्नम की तरफ़ जा रहे हैं और मैं उन्हें कमर पकड़ कर पीछे खींच रहा हूँ।

इसी तरह हर साल तक़रीबन चालीस लाख की तादाद में लोग हज को जा रहे हैं, वहाँ से ख़ूब ज़मज़म और खजूरें ला रहे हैं, लेकिन उन्हें वहाँ की फज़ाओं में खुदा के आखिरी पैग़म्बर की यह आवाज़ नहीं सुनाई दे रही है कि ऐ मेरे मानने वालों, मेरी तरफ़ से खुदा का पैग़ाम सारे इन्सानों तक पहुँचा दो, खुदा ने मुझे क़यामत तक के सारे इन्सानों के लिए रहमत बनाकर भेजा है। जबकि दौरे-अव्वल के अहले-ईमान इसी आवाज़ पर लम्बैक कहते हुए उस वक़्त की आबाद दुनिया में फैल गए थे। लेकिन आज यह आवाज़ दूसरे-दूसरे आमाल के धूम में गुम होकर रह गई है।

इसकी भी पेशीनगोई हदीस में मिलती है, 'बाद के ज़माने में ऐसे वाले लोग तफ़रीह के तौर पर हज़ करेंगे, बीच के दर्जे के लोग तिज़ारत के लिए हज़ करेंगे, उलमा मसले-मसाएल बयान करने के लिए बैतुल्लाह का रुख करेंगे, ग़ुरबा अल्लाह से माँगने के बजाय बंदों से माँगने के लिए बैतुल्लाह का रुख करेंगे.'

इसी तरह रमज़ान में महीना भर मसाजिद में बहुत भीड़ होती है, बाज़ारों में रौनक होती है. मोहल्लों में इफ़्तार पार्टियाँ होती हैं, मसजिदों में ख़त्मे कुरआन और शबीना का एहतमाम होता है, लेकिन इन सब activities के बीच जो चीज़ गुम हो कर रह गई है वह तदब्बुरे-कुरआन और दावते-कुरआन है. इसकी भी पेशीनगोई कुरआन और हदीस में मिलती है.

कुरआन में है, 'और रसूल कहेगा, ऐ मेरे रब! मेरी क़ौम ने इस कुरआन को बिल्कुल नज़रंदाज़ कर दिया था.'

इसी तरह हदीस में आया है कि 'बाद को लोग कुरआन पढ़ेंगे, लेकिन वह उनके हलक़ के नीचे नहीं उतरेगा' (यानी ना वे कुरआन में ग़ौर-व-फ़िक्र करेंगे, ना वे कुरआन के दाई बनेंगे.)

इसी तरह दूसरे हदीस में आया है कि 'मसजिदों में भीड़ होगी, लेकिन वह हिदायत से खाली होगी'

इसी तरह कुछ लोग मसजिदें सजाने में, मीनारों को बुलंद करने में अपना माल लगा रहे हैं और खुश हो रहे हैं कि उन्होंने बड़ी-बड़ी दीनी खिदमात अंजाम दी हैं. लेकिन यह सिर्फ़ खुशफ़हमी है. अगर यह करने का मतलूब काम होता तो सारे पैग़ंबर और उनके सच्चे पैरोकार तारीख़ में यही करते हुए नज़र आते थे. मसजिदें सजाने से मीनारों को बुलंद करने से क्या जहन्नम की तरफ़ जा रहा इन्सानियत का काफ़िला जन्नत में पहुँच जाएगा? सोचिए! सोचिए!! सोचिए!!! सादा मसजिदों की तामीर करना एक ज़रूरी और मतलूब चीज़ है. ना सिर्फ़ मुसलमानों की इबादतगाहें सादा होना चाहिए, बल्कि मुसलमान की पूरी ज़िंदगी सादा ज़िंदगी होनी चाहिए, ताकि मुसलमान की सारी तवज्जोह दावत पर और आख़िरत के तामीर पर लगी रहे.

असल यह है कि कुरआन खालिसतन एक दावती किताब है. कुरआन में सैकड़ों जगह आया है कि 'डरा दो - डरा दो' यानी लोगों को उनके सबसे बड़े मसले से, ज़िंदगी की हक़ीक़त से आगाह कर दो. इसी तरह कुरआन में पैग़ाम पहुँचाने का ज़िक्र बेशुमार जगहों पर आया है. लेकिन बाद को कुरआन की यही असल हैसियत गुम हो कर रह गई, जबकि होना यह चाहिए था कि कुरआन के मानने वाले कुरआन के दाई बन जाते.

ख़ुदा ने तो अपनी किताब को किताबे-दावत, किताबे-हिदायत, किताबे-तदब्बुर बनाया है, लेकिन मौजूदा मुसलमानों की अकसरियत ने उसे किताबे-ग़िलाफ़, किताबे-ख़त्मे कुरआन, किताबे-शबीना, किताबे-कुरआन ख़ानी और बग़ैर समझे पढ़ने की किताब, बग़ैर ग़ौर किए पढ़ने की किताब बना दिया है.

इस तर्जुमे-कुरआन में दावत से ताल्लुक रखने वाली आयतों को highlight कर के, सीधे कुरआन से मुसलमानों को उनका भुला हुआ सबक याद दिलाने की एक कोशिश की गई है

दावत का फ़रीज़ा और मौजूदा मुसलमान

कोई आँखवाला इंसान किसी सांप को देखे और 'सांप-सांप!' ऐसे अलफ़ाज़ उसके मुँह से निकले ऐसा नहीं हो सकता. रोज़मर्रा की ज़िंदगी में लोग दुनियावी ज़िंदगी से ताल्लुक रखने वाली नफ़ा-नुक़सान की बातों से एक-दूसरे को आगाह करते रहते हैं, लेकिन यही लोग ज़िंदगी का जो अब्दि अंजाम सामने आने वाला है उससे पूरी तरह ग़फ़लत में हैं.

मौजूदा मुसलमानों की ग़फ़लत का आलम ग़ैर-मुस्लिमों से कुछ अलग नहीं है, आज का मुसलमान रस्मी तौर पर जन्नत और जहन्नम पर अक़ीदा रखता है. यही वजह है की उसकी सारी दौड़-धूप आख़िरत में जन्नत पाने के लिए और जहन्नम से बचने के लिए नहीं हो रही है. मौजूदा मुसलमानों में हर क्रिस्म की सरगर्मी नज़र आती है, लेकिन उनके दरमियान दावती सरगर्मियों का कोई पता नहीं. वह दीन के नाम पर भी बड़े-बड़े काम कर रह हैं, लेकिन दावत उनके अंदर से तक्ररीबन ख़त्म हो चुकी है.

थोड़ी देर के सफ़र के लिए भी हर कोई ट्रेन में या बस में सीट पर कब्ज़ा करने के लिए दौड़ पड़ता है, लेकिन कैसी अजीब बात है कि लोग अपनी अब्दि सीट को पाने के मामले में ग़फ़लत में हैं, इसकी वजह वही रस्मी अक़ीदा है.

दुनिया का वक़्ती मुक़ाम पाने के लिए हर कोई दौड़-धूप कर रहा है, उस मक़सद के लिए अपने आपको झोंके हुए हैं, लेकिन अब्दि मुक़ाम से हर कोई ग़फ़लत में है.

मौजूदा मुसलमानों में से अकसर की रविश ग़ालिबन ऐसी बन चुकी है, जैसे जन्नत उनके लिए प्लास्टिक के फूल की तरह है और जहन्नम प्लास्टिक के सांप की तरह. जैसा की वाज़ेह है प्लास्टिक का फूल पाने के लिए कोई बेचैन नहीं होता, उसी तरह प्लास्टिक के सांप से बचने के लिए किसी को फ़िकरें करने की क्या ज़रूरत.

इसी रविश के चलते आख़िरत का सबसे बड़ा मसला मौजूदा मुसलमानों के नज़दीक कोई बड़ा मसला नहीं है. इस रविश का नतीज़ा यह हुआ कि मौजूदा मुसलमानों की अकसरीयत को न ख़ुद के आख़िरत की फ़िक्र है और न दूसरों की आख़िरत की फ़िक्र. लेकिन मुसलमानों को यह ख़ूब समझ लेना चाहिए कि उनकी आख़िरत का बड़ा दावत के बग़ैर पार नहीं हो सकता.

माल से मुहब्बत-दावत से दूरी

अपने लिए और अपने बेटा-बेटी के लिए ज़्यादा से ज़्यादा माल समेटने की होड़ में मौजूदा मुसलमान दूसरे लोगों से पीछे नहीं हैं. दावत से दूरी की यह भी एक अहम वजह है. माल जिसका मिशन बन जाए, दीन और दावत उसका मिशन नहीं हो सकता.

इम्तिहान हॉल में ढेर सारे परचे रख दिए जाएँ और तलबा (students) से कहा जाए जिसके हाथ जितने परचे लगेंगे, उस तालिबे-इल्म को उतने परचे लिखने होंगे। तो हर तालिबे-इल्म चाहेगा कि वह सिर्फ एक ही परचा ले, क्योंकि कम से कम एक परचा तो हर एक को लेना जरूरी होगा। कोई नहीं चाहेगा कि उसके हाथ में ज्यादा से ज्यादा परचे आएँ। लेकिन इसी गलती में मौजूदा मुसलमानों की अकसरीयत मुब्तिला है। जिस माल को सारे नबियों ने इम्तिहान का परचा बताया और कोई नबी माल समेटने में नहीं लगा रहा। किसी नबी ने ना अपने लिए बड़े-बड़े महल बनाए, ना अज्रमत के किले बनाए। बड़े-बड़े महल बनाना तो दूर, बड़ी-बड़ी और शानदार इबादतगाहें भी नहीं बनाईं। खुदा चाहता तो नबियों को रहने के लिए बड़े-बड़े महल अता करता और उनके ज़रीए से ऐसी शानदार और बड़ी-बड़ी इबादतगाहें बनवाता जैसी इबादतगाहें तारीक़ (History) में कोई न बना सके।

माल की मुहब्बत में जीने वाला, माल को अपनी ज़िंदगी का मक़सद बनाने वाला इंसान क्या उस नबी का उम्मीती हो सकता है जिसे अल्लाह की तरफ़ से कहा गया था कि आप कहें तो हम अरब के पहाड़ों को सोना (gold) बना देंगे, इस पर रसूलुल्लाह (स.) ने कहा कि नहीं, ऐ मेरे रब! नहीं, ऐ मेरे रब! नहीं, ऐ मेरे रब! बल्कि मैं चाहता हूँ कि तू एक वक़्त मुझे खिलाए और एक वक़्त मुझे भूखा रखे। जब तू मुझे खिलाए तब मैं तेरा शुक्र करूँ और जब तू मुझे भूखा रखे तब मैं तज़रू करूँ (यानी तुझसे फ़रियाद करूँ)।

इसी तरह फुज़ूल-खर्ची की, शान-व-शौकत की ज़िंदगी गुज़ारने वाला उस नबी का उम्मीती कैसे हो सकता है। जिसने कहा था कि तुम नहर पर भी पानी ज़ाया न करो। फुज़ूल-खर्ची को कुरआन शैतान का तरीक़ा बताता है।

इसी तरह बहुतात (यानी और ज्यादा, और ज्यादा पाने) के पीछे दौड़ने वाला शख्स उस नबी का उम्मीती कैसे हो सकता है जिसने कहा कि तुम अपने से (दर्जे में) नीचे वाले को देखो।

नबी ने सारी तर्जीह दावत को दे रखी थी यही वजह थी की नबी के घर में कई बार महीनों तक चूल्हा नहीं जलता था। कोई चूल्हे को तर्जीह दे और उसका चूल्हा न जले ऐसा नहीं हो सकता।

मस्जिदे-नबवी में 9 साल तक चिराग नहीं जला, हज़रत आयशा (र.) से पूछा गया कि 9 साल तक चिराग क्यों नहीं जला, इस पर हज़रत आयशा फ़रमाती, अगर चिराग जलाने के लिए तेल होता तो भूक की शिद्दत से हम उसे पी जाते।

बाद के ज़माने में मस्जिदे-नबवी की तौसीअ (विस्तार) के लिए मस्जिद से लगे हुए रसूल और असहाबे-रसूल के घर हटा दिए गए। इस पर एक ताबई ने आँसूओं के साथ यह कहा कि काश इन्हें बाक़ी रखा जाता, ताकि बाद में आने वाली नसलें इन्हें देखतीं कि वह खुदा जिसके हाथ में सारे खज़ानों की कुंजियाँ हैं, अपने बंदों की कैसी ज़िंदगियों पर राज़ी हुआ।

इस तरह कि बेशुमार मिसालें हैं, जिनसे यह पता चलता है कि खुदा का दीन इंसान को कौनसा मिशन देता है, खुदा के नज़दीक इंसान को किस चीज़ के लिए दौड़-धूप करना चाहिए? वह मिशन

दावत का मिशन है. वह मिशन आखिरत की तामीर का मिशन है.

माल का सही इस्तेमाल यह है कि आदमी अपनी ज़रूरत से ज्यादा माल खुदा के मिशन में लौटा दे. और ज़रूरत उसे कहते हैं जिसके बग़ैर इंसान का गुज़ारा नहीं हो सकता.

शैतान :दावत का सबसे बड़ा दुश्मन

अल्लाह तआला ने कुरआन में शैतान की दुश्मनी से इंसानों को जगह-जगह आगाह फ़रमाया.

इबलीस ने कहा, चूँकि तूने मुझे गुमराह किया है, मैं भी लोगों के लिए तेरी सीधी राह पर बैठूँगा. फिर उनपर आऊँगा उनके आगे से और उनके पीछे से और उनके दाएं से और उनके बाएं से, और तू उनमें से अकसर को शुक्रगुज़ार न पाएगा. (07:16-17)

इबलीस ने कहा, ऐ मेरे रब! जैसे तूने मुझे गुमराह किया है इसी तरह मैं ज़मीन में उनके लिए मुजय्यन करूँगा (यानी बुराइयों को उन्हें नेकियों के रूप में दिखाऊँगा) और सबको गुमराह कर दूँगा. (क़ुरआन 15:39)

इबलीस ने कहा, ज़रा देख, यह शख्स (यानी आदम) जिसे तूने मुझ पर इज़्जत दी है, अगर तू मुझे क़यामत के दिन तक मोहलत दे तो मैं थोड़े लोगों के सिवा आदम की तमाम औलाद को खा जाऊँगा. खुदा ने कहा कि जा, उनमें से जो भी तेरा साथी बना तो जहन्नम तुम सबका पूरा-पूरा बदला है. (क़ुरआन 17:62-63)

5 ऐ लोगो! बेशक अल्लाह का वादा बरहक़ है. तो दुनिया की ज़िंदगी तुम्हें धोखे में न डाले. और न वह बड़ा धोखेबाज़ तुम्हें अल्लाह के बारे में धोखा देने पाए. 6

बेशक शैतान तुम्हारा दुश्मन है तो तुम उसे दुश्मन ही समझो

वह तो अपने गिरोह को इसीलिए बुलाता है कि वे दोज़ख वालों में से हो जाएँ. (35:05-06)

दावत का काम अपने मतलब नतीजे के एतबार से इंसानों को जहन्नम के रास्ते से हटाकर जन्नत के रास्ते पर लाना है, जबकि बख़ौल कुरआन के शैतान और उसके साथी इस मेहनत में लगे हुए हैं कि ज़्यादा से ज़्यादा इंसानों को अपने साथ जहन्नम में ले जाएँ. इसी तरह दावत अपने नतीजे के एतबार से इंसानों को शैतान से तोड़ना है और खुदा से जोड़ना है. **दावत इंसानों को हिज़्बुश-शैतान (यानी शैतान के गिरोह) से निकाल कर हिज़्बुल्लाह (यानी अल्लाह के गिरोह) में लाना है.** इसी वजह से दावत का काम शैतान को हरगिज़ गवारा नहीं. शैतान मुसलमानों के ताल्लुक से यह मेहनतें कर रहा है कि मुसलमानों को दावत से हर तरह दूर कर दिया जाए और वे बेरूह

व खुशफ्रहम दीनदारी पर जम जाएं. क्योंकि शैतान को पता है कि अगर मुसलमान बारूह व हकीक्री दीनदारी पर जमे तो वह अल्लाह के दीन का दाई बने बगैर रह नहीं सकता.

हज के मौके पर मुसलमान अपने दुश्मन को कंकरियां मारने की रस्म तो अदा कर रहे हैं, लेकिन वे अपने दुश्मन की दुश्मनी को नहीं समझ पा रहे हैं. यही वजह है कि तकरीबन 40 लाख की तादाद में हज करने वाले हाजी बैतुल्लाह से दाई बनकर अपने इलाकों में नहीं लौट रहे हैं. वह हाजी और अल्हाज तो जरूर बन रहे हैं, लेकिन दाई हरगिज़ नहीं बन रहे हैं, वह शैतान को कंकरियां मारकर तो आ रहे हैं, लेकिन रहमतुल्लील-आलमीन (स.अ.) की वह आवाज़ उन्हें वहाँ नहीं सुनाई दे रही है, कि अल्लाह ने मुझे सारे इंसानों के लिए रहमतुल्लील-आलमीन बनाकर भेजा है, तुम मेरी तरफ से इस पैगामे-रहमत को (यानी कुरआन को) सारे इंसानों तक पहुँचा दो.

मुसलमान अपने आपको अफ़ज़ल उम्मत तो मानते हैं, लेकिन किस वजह से उन्हें अफ़ज़ल उम्मत बनाया गया था, यह शैतान ने उन्हें भुला दिया है. वह मसजिदों को तो खूब सजा रहे हैं, और मीनारों को तो खूब बुलंद कर रहे हैं, लेकिन शैतान ने उन्हें इस तरह खुशफ़्रहम बना दिया कि वे अपने अहमतरिनी फ़रिज़े को भूल चुके हैं, वह कुरआन की तिलावत तो करते हैं, लेकिन शैतान ने उन्हें यह भुला दिया है कि यह कुरआन हुदल-लिन्नास है जिसे सारे इंसानों तक पहुँचाना उनकी ज़िम्मेदारी है. शैतान की मेहनतों का नतीजा यह हुआ कि जिस उम्मत को खुदा ने कुरआन में दाई गिरोह कहा था, वह उम्मत हकीक्री मानों में दाई न बन सकी.

इसी तरह शैतान गैर-मुस्लिमों के मामले में भी यह मेहनत कर रहा है कि वे इसी दुनिया को सब कुछ समझते हुए इसी दुनिया की दलदल में बुरी तरह फंस जाएं और वे ज़िंदगी की हकीकत, मक़सदे-हयात, ख़ालिक और उसका तख़्लिकी मंसूबा, सच्चाई की तलाश,..... इन चीज़ों के बारे में कभी ग़ौर-व-फ़िक्र न कर सकें.

हर कच्चे-पक्के मकान में कुरआन

कुरआन और हदीस से यह पता चलता है कि खुदा चाहता है कि उसका पैगाम 'कुरआन' हर छोटे व बड़े घर में पहुँच जाए, ताकि जो लोग हक़ के मामले में संजीदा हैं वह हक़ को जान लें. जो हक़ के तालिब हैं, वह हिदायतयाब बन जाएं और जो लोग हक़ के तालिब नहीं, उनपर हुज्जत पूरी हो जाए, ताकि कल अल्लाह की अदालत में कोई यह कह न सके कि खुदाया! मुझे तेरे पैगाम का कुछ भी पता नहीं था और उन लोगों ने तेरा पैगाम मुझ तक नहीं पहुँचाया जिन पर यह पहुँचाने की ज़िम्मेदारी थी. अगर मुझ तक तेरा पैगाम पहुँचता तो मैं भी जरूर हिदायतयाब लोगों में से होता.

मसनद अहमद की एक हदीस के मुताबिक़ रसूलुल्लाह (स.अ.) ने फ़रमाया, 'अल्लाह इस्लाम के कलिमे को यानी कुरआन को हर छोटे और बड़े घर में दाख़िल करेगा.' ज़ाहिर है यह काम अपने आप नहीं होगा, यह काम मोमिनीने-कुरआन अंजाम देंगे, पैगम्बरे-खुदा की यह पेशीनगोई हर हाल में सच होना है. इंशाअल्लाह खुशनसीब होगा वह शाख्स जो कुरआन घर-घर पहुँचाने के इस मिशन में अपना हाथ बटाए.

अब आखिरी वक्त आ गया है कि उम्मत के अफ़राद इस काम के लिए उठें और पूरी ख़ैरखाही के साथ इसे अंजाम दें. तारीख (history) में पहली बार ऐसे हालात पैदा हुए हैं कि आप कुरआन के कॉपिज़ हर घर में पहुँचा सकते हैं. कुरआन के लिए बढ़ने वाले हर हाथ में आप कुरआन थमा सकते हैं. ऐसे हालात तारीख में पहले कभी पैदा नहीं हुए. एक तरफ़ अल्लाह तआला ने कुरआन की पूरी हिफ़ाज़त फ़रमाई और दूसरी तरफ़ तारीख (history) को printing press और internet के age में दाखिल फ़रमा कर ऐसे हालात पैदा किए कि खुदा की किताब कुरआन हर कच्चे-पक्के मकान में पहुँच जाए.

घर-घर में बिजली पहुँच चुकी. घर-घर में टि.व्ही. पहुँच चुका. हर हाथ में मोबाइल फोन पहुँच चुका. लेकिन क्या वजह है कि रब्बुल-आलमीन की किताब जो सारे इन्सानों के लिए हिदायत और रहमत है उन तक नहीं पहुँच पाई, जबकि दुनिया में तक्रीबन 150 करोड़ मुसलमान हैं जिन के पास खुदा की किताब मौजूद है? इसकी सादा वजह यह है कि कुरआन के मानने वाले इस ज़िम्मेदारी से ग़फ़लत में रहे कि खुदा का पैग़ाम उन इन्सानों तक पहुँचाना, उनके लिए नागुज़ीर है, जिन तक वह नहीं पहुँचा है.

अब एक तरफ़ printing press का दौर है और दूसरी तरफ़ हर घर में कोई न कोई पढ़ा-लिखा इंसान मौजूद है. इंसानी तारीख में ऐसा पहली बार हुआ है जो कि ऐसा दौर आया है. हर कच्चे-पक्के मकान में कुरआन पहुँचने की जो पेशीनगोई हदीस में आई है, उसमें इस दौर की पेशीनगोई भी शामिल है. अब कुरआन के मानने वालों का यह काम है कि सारे मवाकों (opportunities) को इस्तेमाल करते हुए हर घर में कुरआन पहुँचाने के मिशन में अपने आपको झोंक दे.

अब तारीख (history) को इस बात का इंतज़ार है कि उम्मत के ऐसे अफ़राद उठें और पैग़म्बरे खुदा की उस पेशीनगोई को वाक़या बना दे जो मसनद अहमद की हदीस में आई है.

उम्मते-मुहम्मदी की नागुज़ीर ज़िम्मेदारी

अल्लाह तआला को यह मतलूब है कि हर ज़माने के इन्सानों तक उसका पैग़ाम पहुँचता रहे (25:1) पैग़ाम रिसानी का यह सिलसिला ह. आदम से लेकर पैग़म्बर आखिरूज़्ज़मा (स.अ.) तक जारी रहा. इस पैग़ाम रिसानी का मक़सद यह था कि जिन लोगों के अंदर हक़ की तलब है वह हक़ को पालें और जो लोग हक़ के तालिब नहीं उनका मुन्किर होना साबित शुदा वाक़या बन जाए. इसी बुनियाद पर आखिरत की अदालत में दोनों फ़रीकों के लिए जन्नत या जहन्नम का फैसला किया जाएगा. पैग़म्बरे-इस्लाम (स.अ.) सातवीं सदी की पहली चौथाई (रूबे-अव्वल) में आए. आप आखिरी पैग़म्बर थे. आपके बाद अल्लाह की तरफ़ से कोई और पैग़म्बर आने वाला नहीं. (33:40)

ख़त्मे-नबुवत का यह मामला किसी पुर-अस्रार सबब से नहीं हुआ, इसका सबब सिर्फ़ यह था कि खुदा का कलाम 'कुरआन' महफूज़ हो गया. (15:9) और अब यह काफ़ी हो गया कि हर ज़माना और हर नसल (पीढ़ी) के लोगों तक इस महफूज़ कुरआन को पहुँचा दिया जाए. गोया कि अब कुरआन पैग़म्बर का क़ायम मुक़ाम है. ख़त्मे-नबुवत के बाद ताहफ़्फुज़े-नबुवत का मसला नहीं है,

बल्कि नबुवत को मुसलसल हर दौर में जारी रखने का मसला है। इसकी अमली सुरत यह है कि कुरआन का तर्जुमा हर ज़बान में छाप कर लोगों तक पहुँचाया जाए और मुसलसल पहुँचाया जाता रहे।

यही 'उम्मते-मुहम्मदी' की असल ज़िम्मेदारी है। 'उम्मते-मुहम्मदी' का अल्लाह की नज़र में 'उम्मते-मुहम्मदी' क़रार पाना इसी पर मौकूफ़ है कि पैग़ाम रिसानी का यह काम किसी वक्फ़े के बग़ैर हर दौर-तारीख़ (history) में जारी रहे। पैग़ामे-नबुवत के इस तबिल्लगे-आम के मिशन में 'उम्मते-मुहम्मदी' के हर फ़र्द को शरीक होना है। यहां तक कि अगर कोई शाख्स इल्म न रखता हो तो वह भी कुरआन के छपे हुए तर्जुमे हासिल करके उन्हें लोगों तक पहुँचाए। मिल्लत के किसी फ़र्द का 'उम्मते-मुहम्मदी' का फ़र्द होना इसी दावती काम के अदायगी पर मौकूफ़ है। जो लोग इस दावती काम को अंजाम नहीं देंगे, वे बिलाशुबहा इन्तेहाई संगीन ख़तरा मोल ले रहे हैं। वह यह की हशर के मैदान में उनसे यह कह दिया जाए कि तुम 'उम्मते-मुहम्मदी' से अलग हो जाओ। 'उम्मते-मुहम्मदी' से तुम्हारा ताल्लुक़ नहीं। 'उम्मते-मुहम्मदी' का फ़र्द होने के लिए जो चीज़ लाज़िमी है। वह खुदसाख़्ता मुहम्मदी इश्क़ नहीं है, बल्कि मुहम्मदी मिशन में अपने आपको शामिल करना है।

ख़त्मे-नबुवत के बाद उम्मते-मुस्लिमा मक़ामे-नबुवत पर

कुरआन की सूह नंबर 5 में इरशाद हुआ है कि,

ऐ पैग़म्बर! जो कुछ तुम्हारे ऊपर तुम्हारे रब की तरफ़ से उतरा है उसे पहुँचा दो। और अगर तुमने ऐसा नहीं किया तो तुमने अल्लाह के पैग़ाम को नहीं पहुँचाया..... (5:67)

ख़त्मे-नबुवत के बाद 'उम्मते-मुहम्मदी' मक़ामे-नबुवत पर है, यानी उसको वही काम अंजाम देना है जो पैग़म्बर ने अपने ज़माने में अंजाम दिया था। अल्लाह की नज़र में 'उम्मते-मुहम्मदी' का 'उम्मते-मुहम्मदी' होना तमाम तर इसपर मौकूफ़ (निर्भर) है कि वह पैग़म्बर की नयाबत में अल्लाह का पैग़ाम लोगों तक पहुँचाने का काम अंजाम दे। वह हर ज़माने के इन्सानों तक खुदा के दीन को उसकी बेआमेज़ सूरत में पहुँचाती रहे। अगर उम्मत ने ऐसा नहीं किया तो वह खुदा की नज़र में 'उम्मते-मुहम्मदी' होने की हैसियत खो देगी।

जहां तक अल्लाह का पैग़ाम सारे इन्सानों तक पहुँचाने का ताल्लुक़ है, उम्मत के लिए इसमें दूसरा कोई ऑप्शन नहीं। यह एक ऐसी ज़िम्मेदारी है जिस को हर हाल में अदा करना है। जिस तरह पैग़म्बर के लिए इस मामले में किसी उज़र (excuse) की गुंजाइश नहीं, उसी तरह आपकी उम्मत के लिए भी किसी उज़र की गुंजाइश नहीं, यहां तक कि दूसरे दीनी आमाल भी उम्मत की नज़ात के लिए काफ़ी नहीं हो सकते, अगर वह दावते-दीन के इस फ़रिज़े को छोड़े हुए हो।

लाखों इन्सान हर रोज़ मर रहे हैं। इस तरह वह इस मौक़े से महरूम हो रहे हैं कि उन्हें खुदा की बात बताई जाए, और वह उसको क़बूल कर के अपनी आख़िरत संवार सकें। ऐसी सूरत में 'उम्मते-

मुस्लिमा' का लाजिमी फ़रिज़ा है कि वह हर उज़्र को छोड़कर अल्लाह का पैग़ाम सारे इन्सानों तक पहुँचाने के मुहिम के लिए उठ खड़ी हों।

कुरआन के मानने वाले – कुरआन के दाई बन जाएं

इन्सान की फ़ितरत में यह है कि वह किसी मामूली सी दरयाप्तशुदा बात का भी दाई बन जाता है। कुरआन का कारी कुरआन समझ कर पढ़ता है, तो वह इन्सान से जुड़ी हुई अटल सच्चाइयों को दरयाप्त करता है, तो वह कुरआन का दाई बने बग़ैर रह नहीं सकता। कुरआन का हकीक़ी पढ़ने वाला व सुनने वाला इन्सान वही है जो उसका दाई बन जाए, लेकिन उम्मत का हाल इसके बरअक्स है।

इन्सानियत का क़ाफ़िला जहन्नम की तरफ़ दौड़ा जा रहा है। और दाई-आज़म मुहम्मद (स.अ.) के उम्मीती होने का दावा करने वाले लोग दीन के नाम पर दुसरी-दुसरी activities में मसरूफ़ हैं, जैसे- Social-work, Milli-work, Community-work. यह सारी activities दावत को छोड़कर बिलाशुबहा बेमाना, बेनतिजा साबित होने वाली हैं।

रसूलुल्लाह (स.) का नबुवत से पहले यह मामूल बन गया था के आप तलाशे-हक़ के लिए ग़ारे-हीरा में जाया करते थे और वहाँ तनहाई में वक्त गुज़ारते, ग़ारे-हीरा में जब आपको दावती मिशन दिया गया, उसके बाद जब आप घर लौटे, तो हज़रत ख़दिजा (र.) जो आपकी अहलिया मुहतरमा थी, उन्होंने बिस्तर लगा दिया, कहा कि आराम कर लीजिए, तो उस पर आपने यह जुमला कहा, अयनर-राहा-या-ख़दिजा? (अब आराम कहां, ऐ ख़दिजा?) यह आपका जुमला मिशन की शुरूआत का जुमला था। लेकिन जब मिशन आगे बढ़ा तो आपकी दावती तड़प और आपकी ख़ैरखाही की कोशिशों पर कुरआन कह रहा है, 'अगर लोग ईमान न लाएं तो क्या आप अपने को हलाक कर लगे?.....' इसी तरह हदीस में आया है कि लोग जहन्नम की तरफ़ दौड़े जा रहे हैं और मैं उनकी कमर पकड़ कर पीछे खींच रहा हूँ।

असल यह है कि इन्सान भेड़-बकरी की तरह नहीं है। इन्सान खुदा की अब्द मखलूक है। इन्सान की सबसे बड़ी ख़ैरखाही यही हो सकती है कि उसे मक़सदे-हयात से बाख़बर किया जाए। उसे ज़िंदगी की हकीक़त बताई जाए। उसे खुदा की अब्द रहमतों की तरफ़ बुलाया जाए। कुरआन इसी हकीक़त को बताने वाली खुदा की किताब है।

मौजूदा ज़माना Printing Press का ज़माना है। Printing Press के दौर से पहले रसूल व असहाबे-रसूल और बाद के दूसरे दाइयों ने जब-जब इस्लाम को लोगों के सामने पेश किया, तो उन्होंने कुरआन सुनाकर इस्लाम की दावत दी। और अब Printing Press के दौर में हम यही काम बाआसानी कुरआन के Distributor बन कर, कर सकते हैं। और उन लोगों को खुदा के Contact में लाने का ज़रिया बन सकते हैं, जो हमारे contact में आते हैं।

लेकिन आज नसली और खुशफ़हम दीनदारी पर कायम उम्मत ने इस अहमतरिन् फ़रिज़े को भुला दिया। और मुसलमान कुरआन जैसी दावती किताब के दाई न बन सके।

कुरआन में सारा ज़ोर तदब्बुर व तफ़क़ुर पर दिया गया है, लेकिन अलफ़ाज़ की तिलावत और ख़त्मे-कुरआन और कुरआन-ख़ानी जैसी चीज़ों का दामन थामने के नतीजे में आज का मुसलमान कुरआन का दाई न बन सका.

ऐसे ही लोगों के बारे में रसूले-ख़ुदा की अल्लाह की अदालत में बख़ौल कुरआन के यह गवाही होगी कि 'ऐ मेरे रब! मेरी क़ौम ने इस कुरआन को किताबे-महज़ूर बना दिया था (यानी पूरी तरह से छोड़ रखी हुई किताब बना दिया था.)'

इसी सूरतेहाल को मद्देनज़र रखते हुए हमने तदब्बुर व तफ़क़ुर और दावते-दीन से ताल्लुक रखने वाली आयतों को flash किया है. उम्मीद है कि क़ारईन उस पर भरपूर गौर करेंगे और कुरआन के दाई बन कर खड़े होंगे.

उम्मत के मसाएल का हल- सिर्फ़ दावत

मौजूदा ज़माने के मुसलमानों का आम ख़याल यह है कि वह ग़ैरों की साजिश का और तशद्दुद का शिकार हैं. मगर कुरआन यह कहते हुए इस नज़रिए को रद्द कर रहा है कि

‘अल्लाह हरगिज़ मुन्किरों को मोमिनों पर कोई राह नहीं देगा’ (4:141)

फिर मुसलमानों के साथ मौजूदा सूरतेहाल का सबब क्या है? कुरआन एक आयत में इसका जवाब इस तरह देता है,

‘और जो मुसीबत तुम को पहुँचती है, तुम्हारे हाथों के किए हुए कामों ही के सबब से है.....’ (42:30)

अब सवाल यह है कि मौजूदा ज़माने में मुसलमानों के साथ ग़ैरों की तरफ़ से जो मसाएल पेश आ रहे हैं, उसका असल सबब क्या है? इसका जवाब कुरआन की एक और आयत से मालूम होता है. उसका तर्जुमा यह है कि

ऐ पैग़म्बर! जो कुछ तुम्हारे ऊपर तुम्हारे रब की तरफ़ से उतरा है उसे पहुँचा दो. और अगर तुमने ऐसा नहीं किया तो तुमने अल्लाह के पैग़ाम को नहीं पहुँचाया. और अल्लाह तुम्हें लोगों से बचाएगा. अल्लाह यक़ीनन मुन्किर लोगों को राह नहीं देता. (5:67)

कुरआन की इस आयत से मालूम होता है कि अहले-ईमान कि हिफ़ाज़त का मामला दावते-इलल्लाह से जुड़ा हुआ है, यानी अहले-ईमान अगर दावत का काम अंजाम दें तो वे हमेशा ख़ुदा की हिफ़ाज़त में रहेंगे और अगर वे दावत का काम छोड़ दें, तो ख़ुदा की हिफ़ाज़त उनसे उठ जाएगी. अहले-ईमान के मसाएल का हल न protest करना है, न टकराव करना. अहले-ईमान के मसाएल का वाहिद हल दावत है. कोई भी दूसरी तदबीर इस मामले में अहले-ईमान के लिए हरगिज़ कारगर नहीं हो सकती.

Dawah work guarantees divine protection of Muslim Ummah.

दावत ही मुसलमानों के लिए वाहिद रास्ता है, इसके सिवा कोई और तरीका नहीं जो मुसलमानों को मौजूदा मसाएल से नजात दिलाने वाला हो. मुसलमानों के लिए फ़र्ज के दर्जे में जरूरी है कि वे दावते-इलल्लाह के सिवा हर दूसरी चीज़ को अपने लिए सेकन्डरि (गैर-तर्जीहयाफ़्ता) बनाएं. वह दावत को अपनी ज़िंदगी का वाहिद मिशन करार दें. उसके बाद ही उनको दुबारा खुदा की हिफ़ाज़त मिलेगी, इसी में उनके लिए दुनिया की हिफ़ाज़त है और इसी में उनके लिए आखिरत की नजात मुखद्दर है.

दावत में खुद की इसलाह भी

ऐ ईमान वालो! तुम ऐसी बात क्यों कहते हो जो तुम करते नहीं. अल्लाह के नज़दीक यह बात बहुत नाराज़ी की है कि तुम ऐसी बात कहो जो तुम करो नहीं. (कुरआन 61:02-03)

मुसलमान दाई बन जाएं, इसी में उनकी अपनी इसलाह भी है. अल्लाह तआला ने ज़मीर की शकल में इन्सान के अंदर एक आला बिठा रखा है जो इन्सान को सही व गलत के बारे में बार-बार आगाह करता रहता है. इन्सान दाई बन जाए और खुद उसकी ज़िंदगी उससे मुख्तलिफ़ हो जिसकी तरफ़ वह दूसरों को दावत दे रहा है. तो अंदर से इन्सान का ज़मीर यह अलार्म बजाता है कि 'वह बात क्यों कहते हो जो खुद नहीं करते?' इस तरह दावत में दूसरे इन्सानों की ख़ैरखाही भी है और खुद की इसलाह भी.

जब-जब इस्लाम को पेश किया गया-

कुरआन को पेश किया गया

तारीख़ में ऐसी बेशुमार मिसालें हैं कि जब-जब इस्लाम को पेश किया गया तो लोगों के सामने कुरआन को पेश किया गया. और तारीख़ में बड़े-बड़े दिमाग़ों ने कुरआन में सच्चाई को दरयाफ़्त कर के इस्लाम क़बूल किया. सहाबा-ए-क़राम इसी बिना पर मुक़री कहे जाते थे कि वे कुरआन के हिस्से याद कर लेते और लोगों को पढ़ कर सुनाते. इसी तरह खुद रसूलुल्लाह (स.) जब इस्लाम को पेश करते तो कुरआन का कोई हिस्सा आप पेश करते थे.

चंद तारीख़ी मिसालें :-

1) मक्का के इब्तिदाई ज़माने का वाक़्या है, तुफ़ैल बिन अमरू अद-दौसी काबा की ज़ियारत के लिए मक्का आए, वह अपने क़बीले के मुअज़्ज़िज़ आदमी थे. कुरैश के कुछ लोग उनसे मिले. और कहा कि यह शख्स (यानी मुहम्मद स.) एक जादूगर आदमी है. तुम उनकी बात न सुनना और उनसे दूर रहना. तुफ़ैल बिन अमरू को मालूम हुआ कि रसूलुल्लाह (स.) बैतुल्लाह में हैं, चुनाँचे वह वहाँ गए, तो उन्होंने अपने कानों में रूई डाल ली, ताकि आपकी आवाज़ न सुन सके.

बाद को उन्हें खयाल आया कि मैं खुद एक समझदार आदमी हूँ. मुझे कान में रूई डालने की

क्या जरूरत है. मुझे मुहम्मद (स.) का कलाम सुनना चाहिए. मैं इस बात से क्यों डरू कि मैं उनका कलाम सुन कर भटक जाऊंगा. वह कहते हैं कि इसके बाद मैं रसूलुल्लाह (स.) से मिला और पूरा किस्सा उन्हें बताया. फिर कहा कि आप मुझे अपना कलाम सुनाईए. आपने तुफैल बिन अमरू को **कुरआन का एक हिस्सा पढ़ कर सुनाया**. वह कहते हैं कि खुदा की कसम वह इतना अच्छा कलाम था कि इतना अच्छा कलाम मैंने कभी नहीं सुना था. वह ऐसी मुन्सिफाना बात थी जिससे मैं पहले कभी वाकिफ नहीं था. उसके बाद तुफैल बिन अमरू इस्लाम में दाखिल हो गए.

2) हिजरते-हब्शा का वाक्या है. रसूलुल्लाह (स.) की इजाजत के तहत कुछ मुसलमान हिजरत करके हबश चले गए, जहां बादशाह नजाशी की हुकूमत थी. मक्का के मुशरिकीन को यह मालूम हुआ तो उन्होंने नजाशी के पास एक वफ़द भेजा और कहा कि हमारे यहां के कुछ नादान लोग अपना आबाई दीन छोड़कर यहां आ गए हैं, उन्हें हमारे हवाले किया जाए, ताकि हम उन्हें अपने साथ वापस ले जाएं. इसके बाद मुसलमानों को बादशाह नजाशी के दरबार में तलब किया गया और मालूम किया गया कि वह दीन क्या है जो उन्हें पैगंबर अरबी (स.) से मिला है. उस वक़्त मुसलमानों में से हजरत जाफ़र बिन अबी-तलिब खड़े हुए और उन्होंने **कुरआन से सूरह मरयम का इब्तिदाई हिस्सा पढ़कर सुनाया**. रिवायात बताती हैं कि उसको सुन कर बादशाह और उसके दरबारियों की आंखों से आंसू निकल आए. यहां तक कि बादशाह की दाढ़ी आंसूओं से तर हो गई.

3) **हजरत उमर इसी कलाम से मुतास्सिर होकर इस्लाम में दाखिल हुए**. इस सिलसिले का मुख्तसर वाक्या यह है कि मक्के का सरदार अबू-जहल ने हुजूर (स.) को क़तल करने वाले को 100 ऊँट बतौर इनाम देने का एलान किया था. उमर मक्का के निहायत ताक़तवर और पहलवान किस्म के आदमी थे. उन्होंने तलवार हाथ में ली और इस इरादे से घर से निकले कि रसूलुल्लाह (स.) को क़तल करके 100 ऊँट हासिल करें.

वह जा रहे थे कि रास्ते में यह मालूम हुआ कि उनकी बहन और बहनोई ने इस्लाम क़बूल कर लिया है. उमर को यह सुन कर गुस्सा आ गया. वे अपनी बहन के घर पहुँचे और बहन-बहनोई को मारना शुरू किया. बहन ने कहा, ऐ ख़त्ताब के बेटे! तुम जो कुछ कर सकते हो करो, हम तो अब इस्लाम क़बूल कर चुके हैं. इसके बाद उमर कुछ नरम पड़े, उन्होंने कहा कि मुझे बताओ कि वह दीन क्या है जिस को तुमने इस्तिथार किया है. **उन्होंने एक सहीफ़ा उनके हाथ में रख दिया जिसमें कुरआन की सूरह ताहा लिखी हुई थी**. उमर ने उसको पढ़ना शुरू किया, यहां तक कि उनकी ज़बान से निकला, **‘कैसा अच्छा और बरतर कलाम है यह!’** इसके बाद वह रसूलुल्लाह (स.) से मिले और आपके हाथ पर इस्लाम क़बूल कर लिया.

4) नबुवत के ग्यारहवें साल मदीना के चंद आदमी काबा की ज़ियारत के लिए मक्का आए, और आपके पैग़ाम से मुतास्सिर होकर इस्लाम क़बूल किया. इसके बाद मज़ीद कुछ लोग आए, उन्होंने

रसूलुल्लाह (स.) से कुरआन सुना और आपके हाथ पर बैअत हो गए यह लोग जब वापस होने लगे तो उनके साथ मक्का से दो आदमी अब्दुल्लाह बिन उम्मे-मक्तूम और मुसैब बिन उमैर कुरआन और इस्लाम की तालीम के लिए भेजे गए. मदीना पहुँच कर उन्होंने लोगों को कुरआन सुनाना शुरू किया और इस्लाम की तालीम से लोगों को आगाह करने लगे.

उस वक़्त मदीने के एक नुमायां सरदार उसैद बिन हुज़ैर थे. उनको मदीने में इस्लाम की इशाअत की ख़बर हुई तो वह उस पर गुस्सा हो गए. उन्होंने यह समझा कि मक्का के कुछ लोग यहां आकर हमारे कम समझ लोगों को बहका रहे हैं और उनके आबाई दीन से उन्हें फेर रहे हैं. चुनाँचे वह अपने घर से हथियार लेकर निकले, ताकि ऐसे लोगों को मार कर भगा दें.

उनकी मुलाक़ात एक बाग़ में मुसैब बिन उमैर से हुई जो लोगों को इस्लाम की दावत दे रहे थे. उसैद बिन हुज़ैर ने मुसैब बिन उमैर को बुरा भला कहा कि तुम यहां इसलिए आए हो, ताकि हमारे कमज़ोर लोगों को उनके दीन से फेर दो. मुसैब बिन उमैर ने कहा, आप बैठिए और हमारी बात सुनिए, अगर वह सही हो तो उसको मान लीजिए और अगर वह सही न हो तो उसको रद कर दीजिए. उसैद बिन हुज़ैर ने कहा कि तुमने इन्साफ़ की बात कही.

उसके बाद वह अपना हथियार अलग रख कर बैठ गए. **मुसैब बिन उमैर ने उनके सामने कुरआन की आयतें पढ़ीं.** उसको सुन कर उसैद बिन हुज़ैर का ज़ेहन बदल गया. उन्होंने कहा कि यह कितना अच्छा और कितना हसीन कलाम है. और उसके बाद उन्होंने इस्लाम क़बूल कर लिया.

5) तक़रीबन ऐसा ही वाक़या मदीना के दूसरे बड़े सरदार साद बिन मआज़ के साथ पेश आया. उनको मदीना में इस्लाम की इशाअत की ख़बर हुई तो इब्तिदाअन वह भी गुस्सा हो गए. वह अपना हथियार लेकर निकले, ताकि ऐसे लोगों को तम्बीह कर दें. वह मुसैब बिन उमैर के पास पहुँचे तो उन्होंने कहा कि आप पहले मेरी बात सुनिए. उसके बाद कोई फैसला कीजिए. उसके बाद उन्होंने साद बिन मआज़ को **कुरआन का एक हिस्सा पढ़कर सुनाया.** रावी कहते हैं कि कुरआन को सुनते ही उनके चेहरे पर इस्लाम की झलक ज़ाहिर हो गई. फिर वह इस्लाम में दाख़िल हो गए.

मौजूदा ज़माने में भी ऐसी बहुतसी मिसालें हैं जैसे, मुहम्मद मामर्याड्यूक पिक्थॉल, मुहम्मद असद (ल्यूपोल्ड), साइंटिस्ट मॉरिस बुकैले, डॉ. निशिकांत चट्टोपाध्याय..... ऐसे ज़हीन लोगों ने भी **कुरआन का गहरा मुतालाअ (deep study) करके सच्चाई को दरयाप्त किया,** फिर इस्लाम में दाख़िल होकर बहुत सी दीनी ख़िदमात अंजाम दीं. इन मिसालों में उन लोगों के सवाल का जवाब भी मौजूद है, जो यह सवाल करते हैं कि क्या ग़ैर-मुस्लिम हज़रात को कुरआन दिया जा सकता है?

इस्लाम के इब्तिदाई दौर में अहले-इमान कुरआन के हिस्सों को याद कर लेते. और उसको लोगों पर पेश करते. वह ज़माना printing press का ज़माना नहीं था, चुनाँचे उस वक़्त वही तरीक़ा काबिले-अमल था. चूँकि आज printing press का ज़माना है. तो आज की निस्वत से

अहले-ईमान को कुरआन का डिस्ट्रिब्यूटर बनना है। यही काम दौरे-अव्वल में मतलूब था और यही काम क़ायमत तक मतलूब है।

‘मदू तक’ कुरआन को पहुँचाना ही मुकम्मल दावत

आम तौर पर यह सवाल किया जाता है कि दावती मक़सद से कुरआन पहुँचाना क्या काफ़ी है? इसका जवाब खुद कुरआन के अलफ़ाज़ में यह है-

‘ऐ पैग़म्बर! जो कुछ तुम्हारे ऊपर तुम्हारे रब की तरफ़ से उतरा है उसे पहुँचा दो. और अगर तुमने ऐसा नहीं किया तो तुमने अल्लाह के पैग़ाम को नहीं पहुँचाया.....’

(कुरआन 5:67)

दावती मक़सद से मदू तक पहुँचाने की चीज़ क्या है इस सवाल का जवाब खुदा के हुक्म में और रसूल के तरीक़े में तलाशना होगा. जैसा कि हम जानते हैं, नबी का मिशन कुरआन से शुरू होता है और कुरआन पहुँचाने के बाद तकमील को पहुँचता है. रसूलुल्लाह (स.) ने हज्जतुल-विदा के मौक़े पर हाज़रीन (उपस्थित जनसमुदाय) से सवाल किया कि ‘क्या मैंने तुम तक अल्लाह का पैग़ाम पहुँचा दिया?’ सबने कहा ‘हां, आपने पहुँचा दिया’. फिर आपने आसमान की तरफ़ मुतवज्जह होकर कहा ‘खुदाया तू गवाह रह इसपर जो यह कह रहे हैं.’

इसी तरह एक मरतबा अबू-जहल ने आपसे कहा कि ‘ऐ मुहम्मद! तुम यही चाहते हो ना कि हम यह गवाही दें कि तुमने हम तक अल्लाह का पैग़ाम पहुँचा दिया, तो सुन लो हम यह गवाही देते हैं कि तुमने हम तक अल्लाह का पैग़ाम पहुँचा दिया’ (अल-बदाया वन-नहाया)

दुसरी-दुसरी चीज़ें, दूसरा-दूसरा literature लोगों तक पहुँचाकर आप दावत का हक़ कभी अदा नहीं कर सकते. उसके लिए आपको सिर्फ़ कुरआन पहुँचाना होगा. इस मामले में दाई के सामने कुरआन पहुँचाने के सिवा दूसरा कोई ऑप्शन नहीं. आप मदू की मज़ीद ख़ैरखाही के लिए कुरआन के साथ दीगर तशरीही literature पहुँचा सकते हैं, लेकिन सिर्फ़ literature पहुँचाना कुरआन पहुँचाने का बदल नहीं हो सकता. खुदा की तरफ़ से जितने भी पैग़म्बर आए उन सबने लोगों तक खुदा का पैग़ाम पहुँचाया.

पैग़ाम पहुँचाना कितना नागुज़ीर है, इस चीज़ का पता कुरआन के इन बयानात से होता है....

जिस दिन अल्लाह पैग़म्बरों को जमा करेगा फिर पूछेगा, तुम्हें (लोगों की तरफ़ से) क्या जवाब (response) मिला था.... (5:109)

इसी तरह जिन लोगों तक पैग़ाम पहुँचाया गया उनसे भी पूछ होने वाली है.

और जिस दिन खुदा उन्हें पुकारेगा और पूछेगा कि तुमने पैगाम पहुंचाने वालों को क्या जवाब दिया था? (कुरआन 28:65)

इसी तरह ऐसा ही सवाल जहन्नम के दारोगा भी करेंगे.

71 और जिन लोगों ने इन्कार किया वे गिरोह-गिरोह बनाकर जहन्नम की तरफ हांके जाएंगे. यहाँ तक कि जब वे उसके पास पहुँचेंगे उसके दरवाजे खोल दिए जाएंगे और उसके मुहाफ़िज़ (पहरेदार) उनसे कहेंगे,

**क्या तुम्हारे पास तुम्हीं लोगों में से पैग़म्बर नहीं आए
जो तुम्हें तुम्हारे रब की आयतें सुनाते थे**

**और तुम्हें तुम्हारे इस दिन की मुलाक़ात से डराते थे. वे कहेंगे कि हां,
लेकिन अज़ाब का वादा मुन्किरों पर पूरा होकर रहा.** (कुरआन 39:71)

कुरआन के इस बयान से यह वाज़ेह है कि जहन्नम के दारोगा यह नहीं पूछेंगे कि 'क्या तुम तक इस्लामी लिटरेचर (यानी इस्लाम के बारे में लिखी हुई इंसानी तस्नीफ़ात) पहुंचाई गई या नहीं.' बल्कि वह यह पूछेंगे कि 'तुम तक खुदा का पैग़ाम पहुंचाया गया या नहीं.' इससे साफ़ वाज़ेह होता है कि लोगों तक तर्ज़ीही तौर पर पहुंचाने की वाहिद चीज़ क्या है, वह खुदा का पैग़ाम 'कुरआन' है.

वाज़ेह हो कि खुदा के पैग़ाम में हक़ को दरयाफ़्त करना ही हक़ को दरयाफ़्त करना है. जैसा कि कुरआन में इरशाद हुआ है.

और जब वे उस कलाम को सुनते हैं जो रसूल पर उतारा गया है तो तुम देखोगे कि उनकी आंखों से आंसू जारी हैं इस सबब से कि उन्होंने हक़ को पहचान लिया. वे पुकार उठते हैं कि ऐ हमारे रब! हम ईमान लाए. पस तू हमें गवाही देने वालों में लिख ले. (05:83)

इसी तरह कुरआन से इस बात का भी पता चलता है कि जिसको कुरआन में हक़ की दरयाफ़्त नहीं हुई, उसको फिर हक़ की दरयाफ़्त कहीं और नहीं हो सकती....

अब कुरआन के बाद और कौन सा कलाम ऐसा हो सकता है जिस पर वे ईमान लाएंगे? (77:50)

ये अल्लाह की आयतें हैं जिन्हें हम हक़ के साथ तुम्हें सुना रहे हैं. फिर अल्लाह और उसकी आयतों के बाद कौन सी बात है जिस पर वे ईमान लाएंगे. (कुरआन 45:06)

जिस इंसान को खुदा की बात समझ में न आई, फिर उसे कौनसी बात समझ में आएगी? जिसे

खुदा के समझाने से समझ में नहीं आया, फिर उसे किस का समझाना समझ में आएगा? जिसका खुदा की दलीलों से इत्मीनान नहीं हुआ, फिर उसका कौनसी दलीलों से इत्मीनान होगा? जिसने खुद खुदा के पैगाम को मानने से इन्कार कर दिया, फिर कौन सा पैगाम उसके लिए सच्चाई का दरवाजा खोलेगा?

इससे यह बात वाजिह होती है कि दाई को पूरे तरजीह के साथ लोगों तक सिर्फ कुरआन को पहुंचाना है, न कि दूसरा-दूसरा लिटरेचर. कुरआन को छोड़कर दूसरा-दूसरा लिटरेचर पहुंचाने से ना मदद पूरा हुज्जत पूरी हो सकती है और ना दाई अपनी ज़िम्मेदारी से बरी हो सकता है.

तो ऐन मुमकिन है कि खुदा दूसरी तमाम इबादतों को रह कर दे...

इंसानों को देने-हक़ की तरफ बुलाना, उन्हें खुदा के मंसूबे से आगाह करना, उन्हें ज़िंदगी की हकीकत और उसके अंजाम से बाख़बर करना यही 'दावत' है. इसी मक़सद के लिए खुदा की तरफ़ से पैग़ाम भेजे गए, किताबें नाज़िल की गईं. अब ख़तमे-नबुवत के बाद खुदा ने अपनी आख़िरी किताब कुरआन की हिफ़ाज़त की और उसे दूसरे इंसानों तक पहुंचाने की ज़िम्मेदारी 'उम्मत-मुहम्मदी' पर सौंपी. अब क़यामत तक के इंसानों को खुदा की बात जानने का वाहिद ज़रिया सिर्फ़ कुरआन है, इसीलिए उसे उन इंसानों तक पहुंचाना ज़रूरी है जिन तक वह नहीं पहुंचा है.

यह बेहद नाज़ुक ज़िम्मेदारी है. इस ज़िम्मेदारी को अदा करने के मामले में उम्मत के लिए दूसरा कोई ऑप्शन नहीं. उम्मत ने इस मामले में अगर कोताही की तो वह खुदा के पास काबिले-माफ़ी नहीं. दूसरा कोई भी अमल जैसे, इबादात, दीगर दीनी ख़िदमात, मसाजिद व मदारिस का तआवुन, हाजियों की ख़िदमत, क्रौम-व-मिल्लत के मसाएल को हल करने की कोशिशें,.....etc. दावती ज़िम्मेदारी का बदल नहीं हो सकती, न यह चीज़ें किसी को दावती ज़िम्मेदारी से बरी करार दे सकती हैं.

कोई खुदा के एक हुक्म को माने और दूसरे हुक्म को न माने तो यह हुक्म मानना नहीं है, बल्कि खुदा के हुक्म के साथ मज़ाक़ करना है. ऐसा अमल खुदा को राज़ी करने वाला हरगिज़ नहीं हो सकता, बल्कि खुदा के ग़ज़ब को दावत देने वाला तो ज़रूर है. जैसा कि हदीस में है,

हज़रत जाबिर (र.अ.) कहते हैं कि रसूलुल्लाह (स.) ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने हज़रत जिब्रील (अ. स.) को हुक्म दिया कि फ़लाँ शहर को जहाँ के हालात इस तरह के हैं उसके बाशिंदों समेत उलट दो. हज़रत जिब्रील (अ. स.) ने अर्ज़ किया, ऐ मेरे रब! उस शहर में तेरा एक ऐसा बंदा भी है जिसने एक लमहे के लिए भी कभी तेरी नाफ़रमानी नहीं की है (जो सारी ज़िंदगी तेरी इबादत करता रहा है). रसूलुल्लाह (स.) फ़रमाते हैं कि (जब जिब्रील अ. स. ने यह कहा तो) अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि तुम उस शहर को सारे बाशिंदों पर भी और उस (इबादतगुज़ार) शख्स पर भी उलट दो, क्योंकि मेरे लिए उस शख्स के चेहरे का रंग (शहरवालों के गुनाहों को देखकर) एक घड़ी के लिए भी नहीं बदला. (मिशक़ातुल-मसाबिह 4:1077)

अहले-ईमान पर जो अल्लाह तआला ने इबादतें फ़र्ज की हैं, वह इसलिए हैं कि उनके ज़रीए से बंदा अल्लाह को याद करे और खुद को सुबह-व-शाम ज़िंदगी की हकीकत और उसका अंजाम याद दिलाता रहे. ऐसा खुद के लिए करने वाला इंसान क्या दूसरों के तालुक से तमाशाई बना रहेगा? खुद को जहन्नम से बचाने के लिए नमाज़ व रोज़े का फ़रिज़ा अदा करने वाला इंसान क्या उन इंसानों के तालुक से जानते-बुझते अंधेपन का सबूत देगा जो ज़िंदगी के अंजाम से बेख़बर ज़िंदगी गुज़ार रहे हैं.

मौजूदा मुसलमान दावती-फ़रिज़े से दूर होने की एक अहम वजह यह भी है कि वे समझते हैं कि वे कलमा गो (कलमा पढ़ने वाले) हैं, वे रसूलुल्लाह (स.) के उम्मत हैं, लिहाज़ा उनकी आखिरत महफूज़ है.

जबकि सहाबा का मामला ऐसा बिल्कुल नहीं था. वह तमाम फ़राएज़ को अंजाम देने के बावजूद अपनी आखिरत की कामयाबी ग़ैर-यक़ीनी समझते थे. खुदा का रसूल उन के बीच मौजूद होते हुए भी वह हवाओं में और बादलों में क़यामत की आमद को महसूस करते थे. इसी तरह कुरआन का बयान भी मौजूदा मुसलमानों की रविश के ऐन उलटा है.

क्या लोग यह समझते हैं कि वे महज़ यह कहने पर छोड़ दिए जाएँगे कि हम ईमान लाए और उन्हें जांचा नहीं जाएगा. (कुरआन 29:02)

बिलाशुबहा अल्लाह ने मोमिनों से उनकी जान व उनके माल को ख़रीद लिया है ज़न्नत के बदले.... (कुरआन 09:111)

हर मुसलमान को अपनी हैसियत के मुताबिक़ दावती मिशन में शामिल होना ज़रूरी है. जो शख्स अपने ग़ैर-मुवाफ़िक़ हालात की बिना पर इस position में न हों कि वह अमली तौर पर दावती-मिशन में शामिल हो सके तो उसे भी कम से कम दरजे में दुआ के ज़रीए से दावती मिशन में शामिल होना ज़रूरी है. जो शख्स खुदा के पास इस हालत में पहुँचे की उसने ना खुद दावती फ़र्ज अदा किया और ना दावती मिशन के हक़ में खुदा से दुआएं की हों तो ऐसा शख्स किस बुनियाद पर खुदा से ख़ैर के फ़ैसले की उम्मीद करेगा.

हकीकत यह है कि बंदा अपने रब से अपनी असलियत छुपा नहीं सकता, इसलिए बंदे की बेहतरी इसमें है कि वह मुस्लिम बने, वह खुदा और दीन के मामले में संजीदा बने.

तो ऐन मुमकिन है कि हशर में खुदा यह कह दे.....

आज हम तुम्हें भुला देंगे जिस तरह तुमने अपने इस दिन के आने को भुलाए रखा. (45:34)

जो उस आने वाले दिन को याद रखेगा वही उस आने वाले दिन से दूसरों को आगाह करेगा. यही आगाह करने की ज़िम्मेदारी ख़तमे-नबुवत के बाद उम्मत-मुस्लिमा पर है. इस ज़िम्मेदारी से तालुक रखने वाली आयतों को कुरआन में जगह-जगह highlight किया गया है, जिससे मुसलमानों का करने का काम क्या है, यह सीधे कुरआन से वाज़ेह हो जाता है और हर तरह से वाज़ेह हो जाने के बाद, खुदा करे

मुसलमानों को करने का काम समझने में आ जाए. खुदा-ना-खास्ता, खुदा-ना-खास्ता फिर भी उन्हें उनके करने का काम समझ में नहीं आता तो ऐन मुमकिन है कि हशर में खुदा उनसे कह दे कि

ऐ मुसलमानों! मेरे बेशुमार बंदे ज़िंदगी की हक़ीक़त और उसके अंजाम से गाफ़िल थे और ज़िंदगी की हक़ीक़त व उसका अंजाम बताने वाली मेरी किताब तुम्हारे पास मौजूद थी. ऐ मुसलमानों तुम्हें मेरे उन बंदों की दया नहीं आयी, तुम्हें यह एहसास नहीं तड़पाया कि मेरे उन बंदों का क्या होगा. तुमने उन तक मेरा पैग़ाम पहुँचाने के लिए दौड़-धूप नहीं की. ऐ मुसलमानों! आज मुझे भी तुम्हारी दया नहीं आती! सोचिए! सोचिए!! सोचिए!!!

मुसलमानों के पास वह सच्चाई है – जो दूसरों के पास नहीं

एक शाख्स qualified डॉक्टर हो, मगर वह डॉक्टरी करने के बजाय दादागिरी करे, जलसा-जुलूस की धूम मचाए, तो उसके तमाम जानने वाले कहेंगे कि तुम यह कैसी नादानी कर रहे हो, तुम को practice कर के बाइज़्जत ज़िंदगी गुज़ारना चाहिए. तुम्हारे मौजूदा मशागिल तो वक़्त और कुव्वत को बरबाद करने के सिवा और कुछ नहीं.

यही हाल मौजूदा ज़माने के मुसलमानों का है, मुसलमान असलन एक दाई गिरोह है, उनके पास वह सच्चाई है जो दूसरों के पास नहीं. तिज़ारती इस्तिलाह में, मज़हब के मैदान में उन्हें एक क्रिस्म की मोनोपलि हासिल है. तमाम अहले-मज़ाहिब में वह तन्हा गिरोह हैं. जिनके पास बेआमेज़ (यानी मिलावट से पाक) मज़हबी सदाक़त मौजूद है, मुसलमानों का मज़हब पूरे मानों में तारीख़ी मज़हब है, जबकि दूसरे तमाम मज़ाहिब ग़ैर-मोतबर रिवायात का मजमुआ हैं. इस्लाम के सिवा किसी भी दूसरे मज़हब को तारीख़ की बुनियाद हासिल नहीं.

इस एतबार से मुसलमानों के लिए अहमतीरन करने का काम यह था कि वह उस सच्चाई को लेकर उठते जो उनके पास मौजूद है. लेकिन मौजूदा ज़माने के मुसलमान सब कुछ कर रहे हैं, मगर इसी एक काम से उन्हें कोई राबत नहीं.

हक़ीक़त यह है कि मुसलमानों के लिए करने का सिर्फ़ एक ही काम है और वह दावते-इलल्लाह है. मुसलमानों की दुनिया की कामयाबी और आख़िरत की नज़ात दोनों इसी एक काम से बाबिस्ता हैं, यही वह काम है जो खुदा ने उनके लिए मुक़द्दर कर दिया है, अगर वह इस काम के लिए

उठें तो वह खुदा की रहमतों का सबसे ज़्यादा हिस्सा पाने के हक़दार ठहरेंगे. और अगर वह इस काम के लिए न उठें तो शदीद अंदेशा हैं कि वह खुदा की पकड़ के ज़द में आ जाएंगे. इस्लाम के नाम पर उनके मौजूदा हंगामे उनको खुदा की पकड़ से बचाने वाले नहीं बन सकते.

क्या ग़ैर-मुस्लिम हज़रात को कुरआन दिया जा सकता है?

आज का मुसलमान अगरचे रस्मी एतबार से कुरआन से जुड़ा हुआ है, लेकिन हकीकी एतबार से कुरआन से टूटा हुआ है. इसी का यह नतीजा है कि मौजूदा मुसलमान इस तरह का बेबुनियाद सवाल करता है, जबकि कुरआन में वाज़ेह अलफ़ाज़ में आया है—

और अगर मुशरिकीन में से कोई शरख़्स तुम से पनाह माँगे तो उसे पनाह दे दो, ताकि वह अल्लाह का कलाम सुने (कुरआन 9:6)

इसी तरह कुरआन में खुदा direct तौर पर मुशरिकीन से मुखातिब है.....

ऐ लोगो! एक मिसाल बयान की जाती है तो इसे ग़ौर से सुनो. तुम लोग खुदा के सिवा जिन्हें पुकारते हो, वे एक मक्खी भी पैदा नहीं कर सकते. अगरचे सबके सब उसके लिए जमा हो जाएं. और अगर मक्खी उनसे कुछ छीन ले तो वे उसे उससे छुड़ा नहीं सकते. मदद चाहने वाले भी कमज़ोर और जिनसे मदद चाही गई वे भी कमज़ोर. (22:73)

इसी तरह रसूले-खुदा (स.) मुशरिकीन को हक़ की तरफ़ बुला रहे थे उसका ज़िक्र कुरआन में इस तरह आया है,

मुशरिकीन पर वह बात बहुत गिरा (भार) है जिसकी तरफ़ तुम उन्हें बुला रहे हो. (42:13)

कुरआन से यह साबित है कि खुदा की तरफ़ से जितने भी पैग़म्बर आए, उन सभी ने लोगों तक खुदा का पैग़ाम पहुँचाया. वाज़ेह रहे यह सारे पैग़म्बर जिन क़ौमों में आए वह क़ौमों पहले से 'मुस्लिम' यानी अल्लाह की इताअत करने वाली नहीं थीं. हज़रत मूसा (अ.स.) और हज़रत हारून (अ.स.) फ़िरऔन और उसकी क़ौम की तरफ़ भेजे गए. जिसके बारे में खुदा अल्लाह तआला ने फ़रमाया है कि 'तुम दोनों फ़िरऔन के पास जाओ कि वह सरक़श हो गया है'

इसी तरह हज़रत लूत (अ.स.) ऐसी क़ौम की तरफ़ भेजे गए जो बदतरीन बुराई में मुब्तिला थी. इसी तरह मुहम्मद (स.अ.) ने सबसे पहले जिन लोगों पर खुदा का पैग़ाम पेश किया, वे बुतपरस्त थे — मुशरिक थे, जिन्होंने हज़रत इब्राहीम (अ.स.) के बनाए हुए तौहीद के मरकज़ को 360 बुतों का बुतख़ाना बना रखा था. इससे वाज़ेह है कि खुदा का पैग़ाम किस माहौल में दावत का काम करता है. और किन लोगों पर खुदा के पैग़ाम को पेश करता है.

एक बेबुनियाद बात यह कही जाती है कि ग़ैर-मुस्लिम हज़रात बावज़ू और बातहारत नहीं होते,

उन्हें खुदा का पैगाम 'कुरआन' कैसे दिया जाए? वाजेह हो कि यह एक बेबुनियाद बहाना है।

सुलह-हुदैबिया के बाद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपने हम ज़माना हुकमरानों के नाम जो दावती खुतूत रवाना किए थे उन में कुरआन की आयतें मौजूद थीं, लेकिन उन खुतूत में यह कहीं लिखा हुआ नहीं था कि इस खत को बावजू और बातहारत पढ़ो।

इसी तरह खुदा के पैगम्बर हज़रत सुलैमान (अ.स.) ने मलैका-सबा को खत भेजा, जो एक मुशरिक खातून थी। कुरआन में इस खत का जो हिस्सा नक़ल हुआ है उसमें कहीं यह लिखा हुआ नहीं है कि इस खत को बावजू व बातहारत होकर पढ़ो। वाजेह हो कि दावत का काम कोई शर्तिया काम नहीं है। वह कामिल खैरखाही का काम है।

इसी तरह कुछ लोग अंदेशा ज़ाहिर करते हैं कि 'खुदा-ना-खास्ता किसी शास्त्र ने अगर कुरआन मजीद की बेहुरमती की तो उसका गुनाहगार क्या उस तक कुरआन पहुँचाने वाला नहीं होगा?' **हरगिज़ नहीं।** बल्कि कुरआन पहुँचाने वाले को खैरखाही का अमल अंजाम देने की नेकी मिलेगी। रसूलुल्लाह (स.अ.) ने अपने हम-ज़माना बादशाहों के नाम खुतूत रवाना फ़रमाए थे, उनमें से एक किसरा था। उसने रसूलुल्लाह (स.अ.) के खत को फाड़ कर टुकड़े-टुकड़े कर दिया। रसूलुल्लाह (स.अ.) को जब यह मालूम हुआ तो आपने फ़रमाया कि किसरा ने अपने सलतनत के टुकड़े-टुकड़े कर दिए। और इतिहास बताता है कि रसूलुल्लाह (स.अ.) की पेशीनगोई हरफ़-ब-हरफ़ पूरी हुई। इस वाक़ये से मालूम होता है कि दाई को खैरखाही का अमल अंजाम देने की नेकी मिलेगी। और मद्दू अपने अमल के लिए खुद ज़िम्मेदार होगा। जैसा कि कुरआन में इरशाद हुआ है।

कहो, ऐ लोगो! तुम्हारे रब की तरफ़ से तुम्हारे पास हक्क आ गया है। जो हिदायत क़बूल करेगा वह अपने ही लिए करेगा और जो भटकेगा तो उसका वबाल उसी पर आएगा, और मैं तुम्हारे ऊपर ज़िम्मेदार नहीं हूँ। (कुरआन 10:108)

और जो लोग हमारी आयतों को नीचा दिखाने के लिए सरगर्म हैं वे अज़ाब में दाखिल किए जाएँगे। (कुरआन 34:38)

हकीक़त यह है कि इस क्रिस्म के शुबहात बयान करना दावत की ज़िम्मेदारी से फ़रार तलाश करना है। हमको चाहिए कि इस मामले में हम सिर्फ़ अपने दावती फ़र्ज़ के बारे में सोचे और कुरआन के तराजीम को तमाम इंसानों तक पहुँचा दें। हमारा काम पहुँचा देना है। किसी भी उज़्र की बिना पर हम ऐसा नहीं कर सकते कि हम अल्लाह के कलाम को अल्लाह के बंदों तक पहुँचाने का काम न करें।

एक अहम बात यह भी वाजेह हो की अब ज़माना पूरी तरह बदल चुका है। अब मज़हबी ज़बर का ज़माना नहीं है, बल्कि मज़हबी आज़ादी का ज़माना है। अब बेशुमार हाथ ऐसे हैं जो कुरआन को

पूरे एहतराम के साथ लेने के लिए आगे बढ़ रहे हैं, अब लोग कुरआन के बारे में जानना चाहते हैं। अब हालात ऐसे हैं जैसे मद् ने दाई का काम आसान कर दिया है।

दूसरी अहम बात यह है कि कुरआन को खुद कुरआन में हुदल्लिन्नास (यानी सारे इंसानों के लिए हिदायत) कहा गया है और कुरआन में इन्सानों का रब इन्सानों से मुखातिब है, वह इन्सानों को उन के सब से बड़े मसले से आगाह कर रहा है, उन्हें मक़सदे-तख्लीक से आगाह कर रहा है। जैसे,

ऐ इंसान! तुझे किस चीज़ ने अपने रब्बे करीम की तरफ़ से धोखे में डाल रखा है जिसने तुझे पैदा किया..... (कुरआन 82:6-7)

ऐ इंसान! तू कशां-कशां (श्रमपूर्वक) अपने रब की तरफ़ जा रहा है। फिर उससे मिलने वाला है। (कुरआन 84:6)

क्या इंसान को याद नहीं आता कि हमने उसे इससे पहले पैदा किया और वह कुछ भी न था। (कुरआन 19:67)

और हमने इंसान को पैदा किया और हम जानते हैं उन बातों को जो उसके दिल में आती हैं। और हम रगे-गर्दन से भी ज़्यादा उससे करीब हैं। (कुरआन 50:16)

कोई लफ़्ज़ इंसान नहीं बोलता, मगर उसके पास एक मुस्तैद (चुस्त) निगरां (सतर्क निरीक्षक लिखने के लिए) मौजूद होता है। (कुरआन 50:18)

मैंने जित्त व इंसान को सिर्फ़ इसीलिए पैदा किया है कि वे मेरी इबादत करें। (51:56)

क्या इंसान खयाल करता है कि हम उसकी हड्डियों को जमा न करेंगे। क्यों नहीं, हम इसपर क़ादिर हैं कि उसकी उंगलियों की पोर-पोर तक दुरुस्त कर दें। (75:3-4)

उस दिन इंसान कहेगा कि कहां भागूं, हरगिज़ नहीं, कहीं पनाह नहीं। उस दिन तेरे रब ही के पास ठिकाना है। उस दिन इंसान को बताया जाएगा कि उसने क्या आगे भेजा और क्या पीछे छोड़ा। (कुरआन 75:10-13)

क्या इंसान खयाल करता है कि वह बस यूं ही छोड़ दिया जाएगा। (कुरआन 75:36)

क़सम है ज़माने की। बेशक इंसान घाटे में है। (कुरआन 103:1-2)

इस तरह इंसान का ख़ालिक कुरआन में जगह-जगह इन्सान से मुखातिब है, तो फिर क्या यह

पैगाम सारे इंसानों के लिए नहीं है? बिलाशुबहा यह सारे इन्सानों के लिए है। कुरआन की यह हैसियत कि वह हुदल्लिन्नास है, इस बात का तकाज़ा करती है कि उसे सारे इन्सानों पर पेश किया जाए, चाहे उनका रिस्पॉन्स जो भी हो।

कुरआन में जगह-जगह यह इन्सान को याद दिलाया गया है कि खुदा उसका खालिक है और लौट कर इन्सान को उसी की तरफ आना है। आज सारे दुनिया में देखिए खुदा के नाम से खुदसाख्ता और झूठे हंगामों की भरमार है। इन्सान खुदा के मामले में बहुत ज़्यादा ग़ैर-संजीदा होने का सबूत दे रहा है। जिस माहौल में वह पैदा हुआ, उस माहौल में खुदा के नाम पर झूठे हंगामे जारी हैं जिनपर वह राज़ी है। कुरआन खुदा की महफूज़ किताब है, उसी में ही खुदा का सही तसव्वुर खुदा के अपने अलफ़ाज़ में मौजूद है। कुरआन के सिवा खुदा का सही तसव्वुर कहीं मौजूद नहीं। उसके अलावा जो कुछ है, लोगों की अपनी उपज है या माहौल की देन, लेकिन बात यहां ख़त्म नहीं हो सकती कि हर आदमी जो उसके पास है उस पर राज़ी रहे। नहीं! इन्सान के लिए खुदा के बारे में संजीदा होने के सिवा दूसरा option नहीं है। इसलिए नहीं है, क्योंकि इन्सान को खुदा के पास जाना है। और उसे अपने ज़िंदगी का हिसाब देना है। इन्सान को खुदा के पास जाना है। यह महज़ अक़ीदे की बात नहीं है। हम रोज़ लाखों लोगों को अपने मर्ज़ी के खिलाफ़ इस दुनिया से जाते हुए देख रहे हैं।

इन्सान बहुत नाज़ुक इम्तहान में है। और इम्तहान की हक़ीक़त न समझने की वजह से ही लोग खुदा के मामले में ग़ैर-संजीदा ज़िंदगी गुज़ार कर मर रहे हैं। यह संगीन सूतेहाल है। लोगों की सबसे बड़ी ख़ैरखाही यही हो सकती है कि उन्हें उनके ख़ालिके-हक़ीक़ी के contact में लाया जाए, उनकी ग़फलत के परदे को फाड़ा जाए।

एक बेबुनियाद बात की वज़ाहत

कुछ लोग एक बेबुनियाद बात यह कहते हैं कि कुरआन का तर्जुमा करना और उसको पढ़ना ग़लत है, लेकिन ऐसा कहने वालों के पास कुरआन या हदीस से कोई दलील नहीं होती। फिर भी वे लोग यह शोशा फज़ा में छोड़कर दूसरे लोगों को कुरआन पढ़ने और समझने से रोकते हैं।

जबकि कुरआन में इसके बरअक्स बात आई है। 1) कुरआन के मुताबिक़ कुरआन ‘हुदल्लिन्नास’ यानी सारे इन्सानों के लिए हिदायत का ज़रिया है (सूरह बक्रा:185), अब चूँकि सारे इन्सान अरबी ज़बान तो जानते नहीं, फिर क्या कुरआन उनके लिए किताबे-हिदायत नहीं है? क्या कोई नया पैग़म्बर उनके लिए उनकी ज़बान में किताबे-हिदायत लेकर आने वाला है?

बिलाशुबहा नहीं! फिर अरबी न जानने वाले लोग खुदा का पैग़ाम कैसे समझें – इसका जवाब तर्जुमा है। तर्जुमे की मदद से वे खुदा का पैग़ाम समझ सकते हैं। 2) कुरआन में कुरआन का तर्जुमा करने की कहीं मुमानियत नहीं है, बल्कि उसकी ताईद है, इरशाद हुआ है :

‘और हमने जो भी पैग़म्बर भेजा उसकी क़ौम की ज़बान में भेजा, ताकि वह उनसे (हमारा पैग़ाम साफ़-साफ़) बयान कर दे.....’ (कुरआन 14:04)

3) कुरआन कारईन को ग़ौर-व-फ़िक्र की दावत देता है, इरशाद हुआ है :

‘क्या ये लोग कुरआन में ग़ौर नहीं करते या उनके दिलों पर ताले लगे हुए हैं.’ (47:24)

जो इन्सान अरबी पढ़ तो लेता है पर समझता कुछ नहीं, ऐसा इन्सान कुरआन के पैग़ाम पर ग़ौर-व-फ़िक्र कैसे करेगा? इसका भी जवाब तर्जुमा है.

हालाँकि तर्जुमा असल मतन (original text) का बदल नहीं बन सकता फिर भी तर्जुमा एक नागुज़ीर ज़रूरत है. मुतर्जिम का काम है कि वह लोगों के सामने कुरआन का आसान से आसान तर्जुमा पेश करे.

खुदा की किताब इस काबिल है कि उसे सबसे ज़्यादा ग़ौर-व-फ़िक्र के साथ पढ़ा जाए. दुनिया की हर किताब, हर इंसानी तस्नीफ़ (इबारत) भी समझने के लिए पढ़ी जाती है, यहां तक कि किसी की लिखी हुई मामूली चिट्ठी भी समझ कर पढ़ी जाती है. ऐसी सूरत में सबसे ज़्यादा ग़ौर-व-फ़िक्र की मुस्तहिक़ किताब ‘कुरआन’ के सिर्फ़ अलफ़ाज़ ज़बान से दोहरा लेना क्या काफ़ी है? हरगिज़ नहीं. कुरआन को समझ कर पढ़ने की दो सूरतें हो सकती हैं. या तो हम अरबी ज़बान सीख कर कुरआन को समझ कर पढ़ें या तर्जुमे की मदद से कुरआन को समझ कर पढ़ें. तब ही हम, हमारा ख़ालिक हम से क्या कहना चाहता है समझ सकते हैं और उसके मुताबिक़ खुद अमल कर सकते हैं और उसके पैग़ाम के दाई बन सकते हैं.

जो लोग बेबुनियाद, बिला दलील शोशे छोड़ते हैं, क्या वे ख़त्मे-नबुवत को नहीं मानते? या फिर क्या वे चाहते हैं कि लोग खुदा का पैग़ाम समझे बग़ैर मर जाएं. ज़िंदगी की हकीक़त जाने बग़ैर लोग ज़िंदगी जीते रहें, फिर एक दिन खुदा के पास चले जाएं? और रमज़ान के महीने में अरबी के अलफ़ाज़ अपने ओठों से अदा करके खुश होते रहें कि हमने कुरआन का हक़ अदा कर दिया? सोचिए! सोचिए!! सोचिए!!!

दीन के मामले में बिला दलील बात कहना या बिला दलील बातों को मानना दोनों ख़तरनाक हैं, ऐसी बिला दलील बातें मानना, कुरआन के मुताबिक़ अपने उलमा और मशाएख़ को ख़ब बनाना है. जो बिलाशुबहा ख़तरनाक है.

अल्लाह तआला हम सब की सही रहनुमाई फ़रमाए और हमारी मदद फ़रमाए, आमीन.

ए. आर. चाऊस, नांदेड़, महाराष्ट्र.

09767172629

कुरआन : एक परिचय

कुरआन : खुदा की किताब

कुरआन अल्लाह की तरफ से उतारी गई एक दावती किताब है, कुरआन सातवीं सदी ईसवी की पहली तिहाई में खुदा की तरफ से मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह बिन अब्दुल मुतल्लिब पर अरबी ज़बान में उतारा गया। कुरआन एक मजमुए की सूत में नहीं उतरा, बल्कि 23 साल की मुदत में अलग-अलग अजज़ा की सूत में उतारा गया। कुरआन अपनी असल अरबी ज़बान में अब तक महफूज़ है। कुरआन पूरे मानों में एक महफूज़ खुदाई किताब है। कुरआन के मतन में न कोई कमी हुई है और न कोई इज़ाफ़ा।

कुरआन का असलूब यह है कि उसमें इन्सान का ख़ालिक बराहे-रास्त इन्सान से खिताब करता है। कुरआन का पढ़ने वाला यह महसूस करता है कि उसका ख़ालिक बराहे रास्त तौर पर उससे हमकलाम होकर कह रहा है कि 'ऐ इन्सान! यह तेरा रब है, जो तेरी क़ाबिले-फ़हम ज़बान में तुझ को खिताब कर रहा है। तू उस कलाम को सून और उसकी इत्तेबाअ कर, इस इत्तेबाअ में तेरी नजात है। इस इत्तेबाअ के ज़रीए तू अपनी ज़िंदगी को हकीकी मानों में कामयाब बना सकता है.'

कुरआन में छोटी-बड़ी 114 सूतें हैं। कुरआन की हर सूह के शुरू में (सूह तौबा को छोड़कर) यह जुमला होता है : 'बिस्मिल्लाहिर-रहमानिर-रहीम' शुरू अल्लाह के नाम से जो बड़ा मेहरबान और निहायत रहम वाला है। इस तरह, कुरआन की हर सूह और मजमुई तौर पर पूरा कुरआन यह बताता है कि कुरआन, खुदा की सिफ़ते-रहमत का इज़हार है, कुरआन का नुज़ूल, रहमते-इलाही का नुज़ूल है। ताहम यह रहमत बारिश की तरह नहीं है कि उस का फ़ायदा अपने आप हर औरत और मर्द को मिल जाए। कुरआन का फ़ायदा सिर्फ़ उस इन्सान को मिलेगा जो कामिल संजीदगी के साथ उस पर ग़ौर करे। जो तालिब बन कर उसमें अपने लिए हिदायत तलाश करे।

हकीकत यह है कि कुरआन खुदाई तम्बीह की एक किताब है। वह असबाक और नसीहत का एक मजमुआ है। कुरआन आम तर्ज़े-तसनीफ़ के मुताबिक़ तैयार नहीं हुआ। ज़्यादा सही तौर पर कहा जाए तो कुरआन एक 'बुक ऑफ़ विज़डम' है। कुरआन का मक़सूद यह है कि कुरआन को पढ़ने वाला अगर कुरआन का सिर्फ़ एक सफ़ा पढ़े या वह उसका सिर्फ़ एक जुमला सुने तब भी उसको उसमें एक message मिल जाएगा।

'कुरआन' ख़ालिके-कायनात का परिचय है, कुरआन बताता है कि एक खुदा है जिसने इस कायनात को पैदा किया है। वही उसको मुसलसल तौर पर संभाले हुए है, वह खादिर-मुत्लख़ है। इन्सान का माज़ी, हाल और मुस्तक़बिल तनहा उसी के क़ब्ज़े में है। वह एक है उसका कोई शरीक नहीं। वह अब्दि है। उसके क़ब्ज़े-कुदरत से कोई चीज़ बाहर नहीं।

खुदा का तख़्लिक़ी मंसूबा

ख़ालिक़ के परिचय के बाद कुरआन में खुसूसी तौर पर जो चीज़ बताई गई है, वह ख़ालिक़ का तख़्लिक़ी प्लॅन है। इस प्लॅन से इंसान को बाख़बर करना कुरआन का मक़सद है। कुरआन, आदमी को वह चीज़ बताता है जिस को वह अपनी कोशिश से नहीं जान सकता था। कुरआन आदमी के बुनियादी सवालात का जवाब देता है कि मैं कौन हूँ, मेरी पैदाइश का मक़सद क्या है। इस दुनिया से मेरे ताल्लुक़ की नोइअत क्या है, जहाँ मैं अपने आपको पाता हूँ, ज़िंदगी क्या है, और मौत क्या? मौत से पहले मुझे क्या करना है, और मौत के बाद मेरे साथ क्या पेश आने वाला है। वह क्या रविश है जो मुझ को नाकाम बनाती है। और वह क्या रविश है जो मुझ को कामयाबी अता करती है। इन सवालात का ताल्लुक़ खुदा के तख़्लिक़ी प्लॅन से है। और कुरआन का मक़सद यही है कि वह इन्सान को खुदा के इस तख़्लिक़ी प्लॅन से आगाह करे।

कुरआन के बयान के मुताबिक़ इन्सान एक अब्दि मख़लूक़ है, मगर इन्सान की ज़िंदगी को दो मुख़्तलिफ़ दौरों में तक़्सीम कर दिया गया है। मौत से पहले का दौर और मौत के बाद का दौर। मौत के पहले का दौर अमल का दौर है और मौत के बाद का दौर अपने अमल का अंजाम पाने का दौर।

दावते-इलल्लाह (लोगों को अल्लाह की तरफ़ बुलाना)

कुरआन के ज़रीए जो लोग सच्चाई को दरयाफ़्त करें, उनके अमली programme का दूसरा हिस्सा वह है जिस को कुरआन में दावते-इलल्लाह कहा गया है यानी खुदाई सच्चाई से दूसरों को बाख़बर करना, इन्सान को उसके ख़ालिक़ व मालिक़ के साथ जोड़ना। अल्लाह की तरफ़ बुलाने का मतलब यह है कि अल्लाह के बंदों को यह बताया जाए कि अल्लाह की ज़मीन पर तुम्हारे लिए सही तरीका सिर्फ़ यह है कि तुम अल्लाह के बंदे बन जाओ।

इन्सान के लिए दुनिया की ज़िंदगी में सिर्फ़ दो खय्ये मुमकिन हैं। एक खुदरुखी (self-oriented life) और दूसरा खुदारुखी (God-oriented life). खुदरुखी का मतलब यह है कि आदमी खुद अपनी ज़ात को अपनी सरगर्मियों का मरकज़ बनाए। वह अपनी सोच के मुताबिक़ चले, वह अपनी ख़्वाहिशों की पैरवी करे, वह अपने ज़ाती तक्वाज़ों की तकमील को ज़िंदगी की कामयाबी करार दे। इसके मुक़ाबले में खुदारुखी तरीका यह है कि आदमी अपने आपको खुदा का मातहत समझे। वह अपने जज़्बात को खुदा के ताबे बनाए। उसके नज़दीक़ ज़िंदगी की कामयाबी यह हो कि वह खुदा की पसंद के मुताबिक़ जिए और खुदा की पसंद ही पर उसका ख़ात्मा हो जाए। खुदरुखी ज़िंदगी में घमंड, हसद, अनानियत जैसे जज़्बात जागते हैं। इन्सान यह समझने लगता है कि हक़ वही है जिस को वह हक़ समझे और बातिल वह है जिस को वह बातिल करार दे। खुदारुखी ज़िंदगी का मामला बिल्कुल इसके बरअक्स है। खुदारुखी ज़िंदगी आदमी के अंदर अब्दियत, आजिज़ी, एतराफ़, खुदएहतेसाबी जैसे जज़्बात उभारती है। पहली सूरत में इन्सान अगर खुदपरस्त बन जाता है, तो दूसरी सूरत में खुदापरस्त।

दावते-इलल्लाह यह है कि आदमी को खुदरुखी ज़िंदगी के बुरे अंजाम से आगाह किया जाए, और उसको खुदरुखी ज़िंदगी इस्तिथार करने की दावत दी जाए, इन दोनों किस्म की ज़िंदगीओं को जानने का मोतबर और मुस्तनद माक़ज़ (authentic source) खुदाई तालीमात हैं जो कुरआन की सूरत में महफूज़ तौर पर हमारे पास मौजूद हैं। दावते-इलल्लाह का काम एक खास उख़रवी नोइअत का काम है। क़ौमी या इख़्तेसादी या सियासी मामलात से बराहे-रास्त उसका कोई ताल्लुक नहीं। यह इन्सान को खुदा और आख़िरत की तरफ़ बुलाने की एक मुहिम है। इसी दीनी और रूहानी असलूब में वह शुरू होती है और अपने इसी असलूब में आख़िर वक़्त तक जारी रहती है।

दावते-इलल्लाह का काम अपनी हकीक़त के एतबार से एक खुदाई काम है, जिसको बंदों के ज़रीए से अंजाम दिया जाता है। ज़रूरी है कि उसको इसी spirit के साथ अंजाम दिया जाए। इस spirit के बग़ैर जो काम किया जाए, वह दावते-इलल्लाह का काम न होगा। ख़्वाह उसको दावते-इलल्लाह के नाम पर जारी किया गया हो।

दावते-इलल्लाह न सियासत की तरफ़ बुलाने का काम है और न क़ौमी मसाएल की तरफ़ बुलाना उसका निशाना है। यह मुक़म्मल तौर पर खुदा की तरफ़ बुलाने का काम है। और इसी खास सूरत में उसको अदा किया जाना चाहिए।

खुदा की तरफ़ बुलाने से क्या मुराद है? उसका इब्तिदाई मक़सद यह है कि इन्सान को खुदा के तख़्लिकी मनसूबे से आगाह किया जाए। उसको बताया जाए कि उसका खुदा के साथ क्या ताल्लुक है और खुदा आयंदा उसके साथ क्या मामला करने वाला है, यह गोया इन्सान को खुदा से मुतारूफ़ कराने (परिचय कराने) का एक काम है। उसका निशाना यह है कि खुदा के बारे में इन्सान की ग़फ़लत टूटे और वह अपनी बंदगी का इदराक़ करके खुदा की तरफ़ मुतवज्जह हो जाए।

वहीदुद्दीन ख़ान,
नई दिल्ली